—ः श्री गणेशायनमः ः—

भूमिका

यों तो सौभाग्य से हिन्दी-साहित्य-क्षेत्र में भी प्रति वर्ष सैकड़ों ग्रन्थ एक से एक अधिक अच्छे प्रकाशित हो रहे हैं, जिनमें कुछ दिन से नाटकों की भी भरमार है। किन्तु वे सब प्रायः हिन्दी भाषा के दूसरे ग्रन्थों की भांति दूसरी भाषाओं से अनुवाद किये हुए ही प्रकाशित होते हैं। किन्तु किसी भी उन्नतिशील भाषा के साहित्य-भण्डारके लिये इस प्रकार के मौलिकग्रन्थों की भी उतनी ही आवश्यकता है कि जितनी अनुवाद किये हुए ग्रन्थों की। अस्तु, हिन्दी-साहित्य ग्रन्थ-लेखकों का प्रधान कर्तव्य है कि वे मौलिकग्रन्थ लिखने का भी उतना ही, बल्कि कहीं अधिक प्रयत्न करें कि जितना वे अनुवाद करने के लिये करते रहते हैं। इसका कारण यह है कि वास्तव में किसी भाषा की निजी सम्पत्ति तो देश-काल की आवश्यकतानुसार स्वतन्त्र रूप से लिखे हुए उसके मूलग्रन्थ ही कहे जा सकते हैं। दूसरी भाषा के अनुवाद किये हुए ग्रन्थ तो उस भाषा पर केवल ऋण-भार ही हैं। अतः इस भांति जो भाषा सदा ऋण ही लेती रहेगी और किसी दूसरी भाषा को देने के लिये अपने मौलिकग्रन्थ न उपस्थित कर सकेगी, वह कब तक दिवालिया न होगी, यह बात हमारे ध्यान

में सहज ही आसकती है। मौलिकग्रन्थों में भी वे उपदेश-प्रद ग्रन्थ कि जो जनता पर प्रभाव डालने में सफल हों अधिक प्रशंसा के योग्य हैं।

यह तो प्रत्यक्ष है कि जनता पर अपने भावों का प्रभाव डालने को किसी भी लेखक के लिये नाटक एक सब से अच्छा और सरल उपाय है। किन्तु इसके साथ ही लेखक को यह भी अवश्य ध्यान रखना चाहिये कि जब वह ऐसे प्रभावशाली मार्ग का अवलम्बन करे तो ग्रन्थ की कथा भी सब भांति पवित्र और ऐसी चुने कि जो समयानुकूल जनता को देश तथा जाति के हित ही की ओर लेजाती हो। तभी तो उस नाटककार का प्रयत्न सफल हो सकता है, नहीं तो कागज़ काला करना तो सभी के हाथ में है। प्रस्तुत पुस्तक में उपरोक्त बातों का पूर्ण ध्यान रखते हुए लेखक ने उसको बड़ी कुशलता से समाप्त किया है।

पुस्तक में वर्णित घटना आज से प्रायः २४२३ वर्ष पूर्व की अति प्राचीन घटना हैं जब कि भगवान महावीर अपनी ३० वर्ष की अवस्था में सन्यास ग्रहण कर चुके थे और लोगों को जैन धर्म का उपदेश कर रहे थे। उन्हीं दिनों कुटिल राजा शता-नीक ने अपने सैन्यबल के अभिमान से अनुचित रीति से सीमा दबाने का असत्य बहाना लेकर शान्तिप्रिय तथा धर्मभीरु राजा दधिवाहन पर चढ़ाई बोलदी।

दोनों राजाओं का एक दूसरे के सामने होने पर वादाविवाद हो कर घमासान युद्ध होता है। इसी बीच में कपटी राजा शता-नीक थकने जैसा बहाना कर पीछे की ओर हटता है और साथ

ही एक बाण आकर निर्दोष राजा दधिवाहन की बगल में घुसता है। राजा दधिवाहन जैसे ही बाण की ओर देखता है वैसे ही कपटी राजा शतानीक उसकी दूसरी बगल में तलवार भोंक देता है। राजा दधिवाहन मूर्छित होकर ज़मीन पर गिरता है और उसका प्राणान्त होजाता है। मृत राजा की समस्त स्वामि-भक्त सेना लड़ते लड़ते ही कट जाती है और राजा शतानीक राजा दधिवाहनके गढ़ पर अधिकार करता है, इसी बीच में राजा शतानीक का लम्पट और इन्द्रियलोलुप सेनापति रानी धारणी को यह दुःखद समाचार देता है। रानी धारणी और कुमारी चन्दनबाला राजा के शव को देख विलाप करती हैं। अन्त में लम्पट सेनापति अपने को राजा दधिवाहन का स्वामि-भक्त सेनापति बतलाकर तथा भविष्य में राजा शतानीक से इस अत्याचार का बदला लेने का मिथ्या बहाना कर रानी और राजकुमारी को उनके प्राण-रक्षा का विश्वास दिला उन्हें समीपवर्ती जङ्गल में भुरमा कर ले जाता है।

यहां पर वह नराधम रानी धारणी से अपनी पाप-वासना प्रकट करता है। जब वह देखता है कि रानी धारणी मेरी बात अनेकानेक प्रलोभनों, भेदभरी बातों और भय दिखलाने पर भी नहीं मानती तब वह नरपिशाच रानी पर बलात्कार करने की ज्योंही चेष्टा करता है त्योंही रानी फुर्ती से सेनापति की कमर से खञ्जर निकाल लेती है। रानी के हाथ में खञ्जर देख सेनापति डर कर हट जाता है। अन्त में रानी उस नराधम को अनेक लांछनाय

देती हुई और "जा मैं अपने धर्मानुसार तुझ पर दया करती हूँ और अपना जीवन इस सतीत्व की वेदी पर बलिदान करती हूँ।" कहकर अपनी छातीमें खञ्जर भोंक लेती है। सेनापति आश्चर्यचकित हो जाता है और राजकुमारी मूर्छित होकर गिर पड़ती है, सेनापति का हृदय इस घटना से द्रवीभूत होता है और वह राजकुमारीको उसकी सुरक्षाके निमित्त अपने घर ले जाता है। किन्तु वहां उसकी स्त्री इस बात की शङ्का करती हैं कि कहीं यह इस कुमारी से प्रेम न करने लगे, इसलिये उसे घर में न रखने के लिए अपने पति को विवश कर देती है। सेनापति इच्छा न रहते हुए भी इस भय से कि कहीं मेरी स्त्री राजा के पास यह खबर न भेजदे कि मैं उसके शत्रु की पुत्री का भरण-पोषण करता हूं, राजकुमारी को बाज़ार में ले जाकर एक वेश्या के हाथ बेंच देता है। वेश्या चन्दनबाला को अपने घर ले जाना चाहती है परन्तु वह नहीं जाती, इसी बीच में देवता प्रकट होते हैं और उस कन्या की वेश्या से रक्षा करते हैं।

इसके बाद नामी धनी सेठ धनवाहा आता है और कुमारी को मोल लेलेता है। सेठ कुमारीको अपनी पुत्रीवत् स्नेह करता है किन्तु उसकी प्रौढ़ा स्त्री इस बात की शङ्का करती है कि मेरा पति कहीं इस नवबाला के प्रेम में न फँस जाय। सेठ की स्त्री कुमारी को अनेक प्रकार के कष्ट देती है किन्तु वह सब कष्टों को सुमनवत् सहन करती है। अन्त में एक दिन सेठ की स्त्री अधिक क्रुद्ध हो कुमारी का शिर घुटवाकर तथा हाथ पैरों में हथकड़ी और बेड़ी

डलवा कर उसे अंधेरे तहखाने में गिरा देती है। जहां पर वह कुमारी ३ दिन तक विना अन्न-जल पड़ी रहती है। तीसरे दिन भी कुमारी को न देखकर सेठ धनवाहा घबड़ाता है। दासी से पूछने पर पता चलता है, और वह दौड़कर उसे तहखानेसे निकालता है। उस समय घरमें खाने का कुछ सामान नहीं मिलता, तब सेठ धनवाहा कुमारी के सामने उड़द के चुकले रखकर हथकड़ी-बेड़ी कटाने के लिये लुहार को बुलाने को जाता है। यहां पर कुमारी चन्दनवाला के कष्टों की पराकाष्ठा हो जाती है और उस समय स्वयं भगवान् महावीर वहां आकर उसकी प्रार्थना करने पर वे उड़दके चुकलों का भोजन ग्रहण करते हैं। उसी समय देवता आकाश से मुद्राओं की वर्षा करते हैं और कुमारीकी हथकड़ी बेड़ियां सोने के जेवर होजाते हैं। इसी समय एक आकाशवाणी होती है कि "ऐ राजा शतातीक और कौशाम्बी नगरी के निवासियो इस सारी सम्पत्ति की स्वामिनी चन्दनवाला है, जब यह पुत्री वीर प्रभू की प्रथम साध्वी होगी तब यह सम्पत्ति दान करने के काम में लायेगी।"

यह लिख देना अनावश्यक न होगा कि यद्यपि मेरे मित्र बा० शेरसिंह जी "नाज़" ने इसके पूर्व उर्दू के कई नाटक लिखे हैं किन्तु हिन्दी-भाषामें उनका यह प्रथम-प्रयास है। अतः मैं लेखक महोदय को उनकी इस पुण्य-कृति के लिये अन्त में धन्यवाद देता हुआ हिन्दी भाषा-प्रेमियों से 'नाज़' जी के उत्साह-वर्द्धन के निमित्त इसे अपनाने की उदार कृपा दिखलाने की विनम्र प्रार्थना करता हूँ।

हिन्दू-संसार कार्यालय,
देहली।
२७-६-१९२७

बलरामसिंह भदौरिया, 'कुमुद'
व्यवस्थापक,
'हिन्दू-संसार'।

ला० शेरसिंह जैन "नाज़" देहल्वी

प्रेमी पाठको !

नाटक क्या वस्तु है और उसके नियम क्या हैं इत्यादि बातों को पूर्ण रूप से दिखलाने के लिये समय और अवकाश की आवश्यकता है, तथापि संक्षेप में यह न बतला देना भी अनुचित होगा कि नाटक निर्माण कितना कठिन है। देखने में तो यह कार्य्य सरल मालूम पड़ता है, किन्तु लिखते समय लेखक की बुद्धि की तीव्रता का भली भांति उपयोग व परीक्षा हो जाती है। प्रत्येक विषय का अनुभव और व्यवहार कुशलता की कितनी आवश्यकता है? पात्रों के भावों को कितना भावपूर्ण व व्यावहारिक बनाया जाता है? सम्पूर्ण कार्य्य अत्यन्त चित्ताकर्षक बनाने के लिये कितनी बुद्धिप्रखरता व व्यवहार चातुर्य चाहिये? इन समस्त प्रश्नों का उत्तर नाटक कर्ता को ही प्राप्त होता है। यही कारण है कि बहुत से मनुष्यों के विचार दिल के दिल ही में समुद्र की तरङ्गों की भांति उठते और नष्ट होते रहते हैं। मुझे भी नाटक निर्माण से पूर्व इन समग्र कठिनाइयों का भीषण रूप दृष्टिगोचर हुआ।

किन्तु कुछ तो हार्दिक इच्छा और उससे भी अधिक मित्रों का आग्रह, इन दोनों कारणों से लाचार हो इस नाटक का लिखना आरम्भ कर दिया। परन्तु निर्माण काल में जिन बाधाओं और आपत्तियों का मुझ पर आक्रमण हुआ उनसे लोहा मानना पड़ा और इच्छा होते हुए भी इस कार्य को छोड़ देने की उत्कण्ठा हुई। किन्तु मित्रों और शुभेच्छुओं का विचार कर पुनः लज्जा हुई कि जिस कार्य को हाथ में लिया उसे अधूरा कैसे छोड़ा जाय। अतएव फिर उत्साह पूर्वक जिस भांति हो सका इसको समाप्त किया।

अब इस विषय पर ध्यान जाता है कि मैं अपने उद्देश्य में कितना सफल हुआ हूं और मैंने उसकी सिद्धि में कहां तक पदार्पण किया है, इन प्रश्नों का उत्तर पाठकों के प्रेम व निष्पक्ष चित्त द्वारा स्वयं मिल जायगा।

हां, इतना निवेदन अवश्य करूंगा कि इस नाटक में अन्य कतिपय नाटकों की भांति अनुचित मन बहलाव, शृङ्गार रस का आधिक्य व अमानुषिकता की दुर्गन्धि कदापि न आवेगी जिनको विद्वान् नाट्यकारों ने नाटक के दोष बतलाये हैं।

अन्त में मैं अपने सुहृदय व शुभचिन्तक लाला कुञ्जलाल ओसवाल व प्रिय अयोध्याप्रसाद 'दास' का अत्यन्त कृतज्ञ हूँ जिनके उत्साह दिलाने व निर्माण में सहायता देने से मैं इसे लिखने में समर्थ हुआ। वस्तुतः यदि ये सज्जन अपने प्रेमाग्रहपूर्ण शब्दों द्वारा समय २ पर मुझे उत्साह न देते तो यह कठिन कार्य कदापि समाप्त न होता।

क्षमा प्रार्थी—

'नाज़' देहलवी।

नाटक-पात्र

[१] भगवान महावीरस्वामी	जिन धर्म के चौबीसवें तीर्थंकर।
[२] महाराजा नन्दीवर्द्धनजी	भगवानमहावीरस्वामी के ज्येष्ठ भ्राता।
[३] राजा दधिवाहन	एक दयालु और धर्मी राजा।
[४] राजा शतानीक	कोशाम्बी नगरी का राजा और राजा दधिवाहन का शत्रु।
[५] सेनापति	राजा शतानीक का सेवक और कामी पुरुष।
[६] सेठ धनवाहा	कोशाम्बी नगरी का एक धनवान और ज्ञानी पुरुष।
[७] सेठ मूलचन्द	६० वर्ष का धनवान लोभी और कंजूस जो इस वृद्धावस्था में भी विवाह का इच्छुक है।
[८] मोपाला	सेठ मूलचन्दका मसख़रा नौकर।
[९] लाला ज्ञानीप्रसाद	साधारण पुरुष और सुशीला का पिता।
[१०] कन्हैयालाल	ज्ञानीप्रसाद का पुत्र और अनमेल विवाह का प्रतपक्षी।
[११] बनवारीलाल [१२] श्यामनाथ	कन्हैयालाल के मित्र और अनमेल विवाह के प्रतपक्षी।
[१३] महाशय रतनलाल	एक लोभी, मूर्ख और अज्ञानी पण्डित

महन्त, श्रावक, मन्त्री, द्वारपाल, सिपाही, चौधरी, बराती आदि।

नाटक-पात्री

[१] रानी धारणी	राजा दधिवाहनकी पतिव्रता स्त्री।
[२] चन्दनबाला	राजा दधिवाहनकी गुणवती पुत्री।
[३] मूला	सेठ धनवाहा की मूर्ख और दुष्टा स्त्री।
[४] कमलावती	महाशय रतनलाल की स्त्री।
[५] रुक्मणि	ज्ञानीप्रसाद की स्त्री।
[६] जमुना [७] कामनी [८] सुन्दर	कोशाम्बी नगरी की वेश्याय।

अहिंसा, हिंसा, सेनापति की स्त्री, चन्दनबाला की दासियां आदि।

॥ वन्दे जिनवरम् ॥
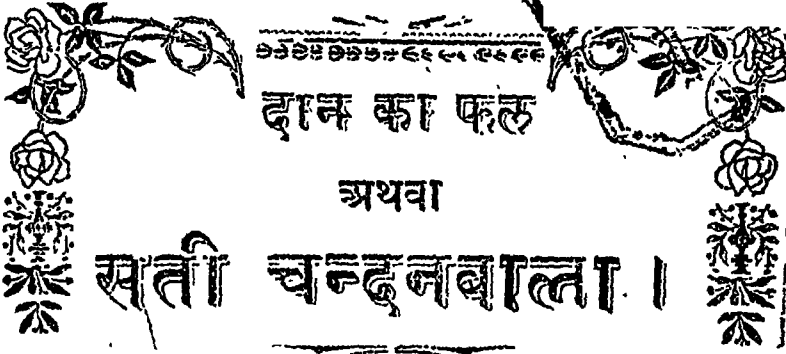
दान का फल
अथवा
सती चन्दनबाला ।

अङ्क १ दृश्य १

अगला महल ।

[राजा दधिवाहन अपनी रानी धारणी और पुत्री चन्दनबाला के साथ श्री १००८ भगवान् महावीर स्वामी की स्तुति करते हुए नज़र आते हैं]

गाना ।

करें वन्दना आप की महावीर भगवान् ।
जिससे इस संसार में पाएं पूर्ण ज्ञान ॥
आप गुणों की खान हैं हम सेवक नादान ।
अद्भुत महिमा आपकी क्यों कर करें बखान ॥
भवसागर के बीच में नाव पड़ी मंझधार ।
कृपासिन्धु आप हैं कीजे बेड़ा पार ॥

काम क्रोध और लोभ के बंधन से छुटजाएं।
दयादृष्टि कीजिये मोक्ष मार्ग को पाएं॥
आत्मदर्शी हम बनें परिपूर्ण हो त्याग।
छूटें राग और द्वेष से हासिल हो वैराग॥
(सब का जाना)

अङ्क १ दृश्य २

स्थान जंगल।

(नैपथ्य में—हाथ में तलवार लिये हुए हिंसा का प्रवेश)

हिंसा—बह रही हैं खून की धाराएं मेरे काम से।
लोक और परलोक दोनों कांपते हैं नामसे॥
बुज़दिली से दुश्मनी है, वीरता से प्यार है।
कुन्द पड़ सकती नहीं, यह धर्म कीतलवारहै॥

अहा! कैसा विचित्र दृश्य कितना सुहावना और अच्छा खेल है। जब तक दस बीस पशुओं, दो चार मनुष्यों को प्रति दिन खून में लथ-पथ ज़मीन पर तड़पते मृत्यु की वेदना से चीखते-चिल्लाते गला कटने के दुःख से हाथ पांव मारते और एड़ियां रगड़-रगड़ कर दम तोड़ते नहीं देख लेती, उस समय तक मेरे नेत्रों को सुख और मेरे हृदय को आनन्द प्राप्त नहीं होता। ऐसे उत्तम मनोहर और वीरता के कार्य को महापाप और अत्याचार बतानेवाले मनुष्य वास्तव में कायर बुज़दिल और डरपोक हैं जो अपने कायरपन

और बुज़दिली को दया और धर्म की आड़ में छुपाना चाहते हैं। यदि इसमें कुछ झूट है तो वह मेरी इस बात का उत्तर दें कि जहां कहीं और जब कहीं धर्म की बातचीत होती है तो बड़े मोटे मोटे शब्दों में इस अमर के साबित करने की कोशिश की जाती है कि संसार में उनसे बढ़कर किसी मनुष्य के हृदय में धर्म का प्रेम नहीं, यहां तक कि बातों बातों में हज़ारों क्या लाखों मर्तबा वह धर्म के नाम पर अपना तन, मन, धन, सब कुछ बलिदान कर देते हैं, परन्तु इसके बाद अधिक से अधिक क्या करते हैं? यही कि दुनिया की झूटी लाज और समाज में वाह! वाह! होने के विचार से दो चार पैसे, सेर दो सेर अन्न, फटा-पुराना वस्त्र धर्म के नाम पर दे दिया और मन हीं मन में यह समझ लिया कि बस देवता हमसे प्रसन्न हो गये, हमारे सारे पाप धुल गये और स्वर्ग हमारी जागीर हो गया। यह मूर्ख इतना नहीं समझते कि देवता हमारे मुट्ठी दो मुट्ठी अन्न और वस्त्र के मोहताज नहीं, यदि हमारे मन में देवताओं का सच्चा प्रेम है, अगर हम धर्म को जीवन से अधिक प्यारा समझते हैं तो हमें धर्म के नाम पर अपनी जानों का बलिदान करना चाहिये, अपने लाल लाल रक्त से देवताओं की मूर्तियों के मस्तक पर टीका लगाना चाहिये। यहां और वहां दोनों लोक में उन्हें सुर्खरू बनाना चाहिये।

कोई ख़ञ्जर के तले तड़पे, कोई तलवार पर।
खून के छींटे नज़र आएं दरो दीवार पर॥
किस लिये करता है भय संसार इस मज़मून से
देवता प्रसन्न होते हैं मनुष के खून से॥

(अहिन्सा का प्रवेश)

अहिंसा–झूट बिलकुल झूट ! देवता हमारे चाम, हाड़, और रक्त के भूखे नहीं, वह संसारी जीवों की तरह खाने और पीने के मोहताज नहीं ।

दया की उनको तमन्ना, न दान की इच्छा ।
न हाड़, मांस से मतलब न जान की इच्छा ॥
भली है या कि बुरी है, सिवा है या कम है ।
न उसकी इनको खुशी है न इसका कुछ ग़म है॥

हिंसा–(चौंककर) तू कौन ?

अहिंसा–पाप और अत्याचार की दुश्मन ।

हिंसा–तू यहां किस कारण आई ?

अहिंसा–संसारवालों को तेरे धोके और फरेवसे बचाने केलिये ।

हिंसा–कैसा धोका ? और किसका फरेब ? क्या देवताओ को जीवों का बलिदान नहीं देना चाहिये ?

अहिंसा–कभी नहीं ! हरगिज़ नहीं, हम दान में सूखी रोटी देते हैं या मोहन भोग देवता इसको नहीं देखते ।

हिंसा–(मुंह चिड़ाकर) आई ! बड़ी बेचारी उपदेश देनेवाली क्या कहा ? फिर कहना, देवता इसको नहीं देखते ? अच्छा देवता फिर क्या देखते हैं ?

अहिंसा–वह मनुष्य के हृदय की सच्ची श्रद्धा और उसके धार्मिक प्रेम को देखते हैं ।

हिंसा—खाली खूली श्रद्धा और धार्मिक प्रेम हमें कुछ लाभ नहीं पहुंचा सकता यदि हम अपनी श्रद्धा और प्रेम का सुबूत देना चाहते हैं तो इस श्रद्धा और प्रेम पर हमें ऐसी वस्तु का बलिदान देना चाहिये जो दुनिया में सबसे अधिक प्यारी हो, और ऐसी वस्तु जीवन के सिवा और कोई नहीं।

अहिंसा—बस ! बस !! यह बकवास बन्द कर अपने गन्दे मुंह से ऐसे कठोर शब्द निकालकर संसार की हवा को ज़हरीली न बना, धर्म और देवताओं के नाम पर गूंगे, पशुओं और निर्दोष मनुष्योंका रक्त बहाना सब पापोंसे अधिक घोर पाप और अत्याचार है। हमें बुद्धि और ज्ञान से काम लेकर ये विचार करना चाहिये कि जिन महा पुरुषों ने दूसरे मनुष्योंका उद्धार करने, उन्हें अन्याय, पाप और संसार की सारी बुराइयों से बचाने के लिये अपना जीवन अर्पण कर दिया, वह हमारे इस कार्य से सुखी होंगे या दुःखी।

ज़ुल्म की आशा, दया और धर्म के अवतार से ?
देवता को वास्ता ? पाप और अत्याचार से ?
जग में जो आए, अहिंसा धर्म के प्रचार को।
है यह अनहोनी, वह, खेंचे म्यान से तलवार को॥

हिंसा—वास्तव में भारत जब से ज़मीन पर "दया" के मनहूस शब्द ने जन्म लिया है, इस देश की तमाम बड़ाई और शोभा मिट्टी में मिल गई, भीम की गदा, अर्जुन के बाण, वीरों की वीरता और

सूरमाओं की सूरताई एक स्वप्न था, कि आंख खुलते ही कुछ नहीं अब रक्त बहाना और युद्ध करना तो कैसा? इनका नाम सुनते ही मनुष्य का हृदय मृत्यु के भय से थरथराने लगता है, हाथ, पांव कांपने लगते हैं, शरीर का रूंआ रूंआ खड़ा हो जाता है।

बताओ तो यही, या और कुछ इसने किया आके।
कि जो राजा थे कल, हैं आज वह दास अपनी परजा के॥
किसी क़ाबिल न रक्खा, आह! तलवारों को, तीरों को।
दया ने कर दिया अफसोस, कायर शूरवीरों को॥

अहिंसा—भूल है, भूल है, अरी नादान, मूर्ख, यह तेरी सबसे बड़ी भूल है। भारत की शोभा दया और धर्म का पालन करने से नहीं, बल्कि अन्याय और अत्याचार के कारण से मिटी है।

जो कुछ किया, किया है, यह पाप और झूठ ने।
भारत की शान खोई है आपस की फूट ने॥

हिंसा—ऐसा नहीं हुआ।

अहिंसा—अवश्य ऐसा ही हुआ! एक निर्दोष अबला स्त्री को ज़बर्दस्ती भरी सभा में बुलाकर उसकी साड़ी खिचवाना क्या संसार में इस पाप से बढ़कर और भी कोई पाप हो सकता है? बड़े २ ज्ञानी, विद्वान्, बलवान और ब्रह्मचर्य का पालन करनेवाले महा पुरुषों का सभा में मौजूद होते हुए ऐसे घोर पाप और अत्याचार को देखकर गूंगे और बहरे बन जाना,

क्या इससे बढ़ कर और कोई आश्चर्य की बात हो सकती है ? कुरुक्षेत्र के मैदान में कौरवों और पांडवों का वह ज़बर्दस्त युद्ध जिसमें पिता ने पुत्र, भाई ने भाई, मित्र ने मित्र का गला अपने हाथ से काट डाला, क्या इससे बढ़कर और कोई आपस की फूट का सुबूत हो सकता है ? पूरे अठारह दिनों की लड़ाई जिसमें बड़े २ वीर और शूरमा मारे गये क्या इससे ज़्यादा और कोई बात भारत की शोभा मिटाने का कारण हो सकती है ? यदि हो सकती है, तो उसका कुछ पता निशान बता ! बता !! ओ घातकी पापन चाण्डालनी बता !!! दुर्योधन और युधिष्ठर कौन थे ? एक दादा के दो पोते फिर उनमें युद्ध का कारण, यही संसारके झूटे राज-पाट का लोभ, धन दौलत का लालच, अगर कपटी अभिमानी और दुराचारी दुर्योधन श्रीकृष्ण महाराज के उपदेशानुसार दया और धर्म का पालन करता तो क्यों राज-पाट के साथ अपने प्राण गँवाता ? और किसलिये भारत के नाम पर हमेशा के वास्ते पाप और अत्याचार का न मिटनेवाला टीका लगता ? किस प्रकार हज़ारों घर उजड़ते, वस्तियां जंगल वन जातीं और किस कारण लाखों अवलाएं विधवा हो जातीं ?

साथ अपराधी के, निर्दोषों को मारा किस लिए।
मौत के द्वारे हजारों को उतारा किस लिए ॥
कट गये लाखों के सर दरिया लहू का वह गया।
मिट गये वो तो मगर करनी का चरचा रह गया ॥

हिंसा-जा जा; अपना ये उपदेश बुज़दिलों और कायरों को सुना, मेरी भक्ति और सेवा करने वाले उपदेश सुनना तो कैसा ? तुझे अपने पास खड़ा तक न होने देंगे। वह जिस प्रकार आज तक मेरी आज्ञानुसार देवताओं को प्रसन्न करने के लिए पशुओं और मनुष्यों का लहू बहाते रहे हैं। इसी प्रकार आइन्दा भी उनका रक्त बहाते रहेंगे तू कितना ही चीखे चिल्लाए कितना ही बिलबिलाए और शोर मचाए किन्तु यह मनोहर शुभ कार्य बन्द नहीं हो सक्ता।

सुनी है अब तक न अब सुनेंगे किसी की बातें मेरे पुजारी।
है काम उनका हरएक निराला है बात उनकी हरएक न्यारी॥
उन्हें प्यारा है धर्म जितना नहीं है यह ज़िन्दगी प्यारी।
यूंहीं बहेगी लहू की धारा यूंहीं रहेगा यह खेल जारी॥
बुझाएंगे क्या दया के छींटों से इस लगी को बुझाने वाले।
कि हो गये वे निशान लाखों निशान इसका मिटाने वाले॥

अहिंसा-ओ हो! इतना घमण्ड! इतना अभिमान! याद रख घमंडी और अभिमानी मनुष्यों का अन्त में ऐसा भयानक परिणाम होता है जिसको देखकर शरीर के अन्दर छुपा हुआ मनुष्य का हृदय भी कांप उठता है। घमंडी रावण का क्या हाल हुआ, अभिमानी कंस की क्या दुर्दशा हुई ? इसे दस बीस मनुष्य ही नहीं बल्कि सारा संसार जानता है। जब ऐसे २ बलवान राजा जिनके कि भय से बड़े २

वीर और सूरमा थर्राते थे कुत्तों की तरह मारे गये और उनके वंश का पृथ्वी से इस तरह खोज मिटा दिया गया कि आज के दिन कोई उनको याद करके रोने वाला नहीं, तब तू क्या और तेरा बल क्या ।

हिंसा—क्या कहा मेरा बल ?

अहिंसा—हां ! हां !! तेरा बल ?

हिंसा—अभी तूने मेरा बल देखा ही कहाँ हैं जिस समय तू मेरा बल देख लेगी, उसी समय केवल यही नहीं कि अश्चर्य से तेरी आंखें पथरा जाएं बल्कि मृत्यु के भय से तेरा हृदय और शरीर दोनों कांप जाएँगे । यह मेरा बल नहीं तो और क्या हैं ? जिससे युद्ध करने के लिए बड़े २ देवताओं ने इस संसार में जन्म लिया किन्तु मेरे बल पर विजय न पा सके ।

अहिंसा—ये बात हैं ! अच्छा तो न खबर मालूम हो गया कि तेरा हो खंडन करने और अभिमान का मर्दन करने के लिए भगवान महावीर स्वामी ने कुण्डलपुर के महाराजा सिद्धार्थ की पटरानी त्रिशला देवी के गर्भ से जन्म लिया है उनके एक ही धर्म उपदेश के प्रभाव से संसार में दया का तेज फैल जाएगा । और तमाम मनुष्य अहिंसा धर्म का वृत धारण करने लगेंगे इस कारण और थोड़े दिनों तक यह पाप और अत्याचार करले ।

भगवान के उपदेश से पापों की जड़ कट जायगी।
पाखण्डियों की आबरू सँसार में घट जायगी॥
शक्ति दया की देख कर छाती तेरी फट जायगी।
यह ज़ुल्मकी काली घटा इक आनमें हट जायगी॥
यह धर्म है ये है दया सब को नज़र आ जायगा।
जो सह रहा हैं आज दुःख कल शांति वह पायगा॥

हिंसा—मैं! अगर मैं हूं !! तो कभी ऐसा न होने दूंगी

(हिंसा का जाना)

अहिंसा—तू क्या? अगर तेरे तमाम चेले चांटे मिलकर अपना जोरलगाऐं, तब भी ये होनी होकर ही रहेगी।

(अहिंसा का जाना)।

अङ्क १   दृश्य ३

राजा दधिवाहन का बाग़ ।

[राजकुमारी चन्दनबाला अपनी दो सहेलियों चम्पा और दुर्गावती के साथ सैर कर रही है]

गाना ।

अपने मुखड़े का चमत्कार दिखाओ भगवन् ।
मूर्छित देखने वालों को बनाओ भगवन् ॥
सब पे हो जाय अहिंसा की बड़ाई परगट ॥
जग में जिन धर्म का सन्मान बढ़ाओ भगवन् ॥
फिर न इच्छा हो किसी और के दर्शनकी इन्हें ।
वह दृश्य तुम मेरी आंखोंको दिखाओ भगवन् ॥
मित्र हो जायं बोह सब, हैं जो लहू के प्यासे ।
मंत्र हमको कोई इस ढंगका सिखाओ भगवन् ॥
दान दो अपनी दया का कि दयालू तुम हो ।
"नाज़" को भी कोई उपदेश सुनाओ भगवन् ॥

चम्पा–राजकुमारी जी ! मैं कई दिनों से देख रही हूं कि आप का मन किसी गहरी चिन्ता में फँसा हुआ है, यह चांद सा मुखड़ा जो हर समय फूलों की तरह हँसता हुआ रहता था, उदास और कुम्लाया हुआ दिखाई देता है। आख़िर इन बातों का कोई न कोई कारण ?

चन्दनबाला-प्यारी सखियो ! मैं आज आठ दस रातों से बराबर नींद में डरावने और भयानक स्वप्न देख रही हूं। जिसकी वजह से मेरा सुख, सन्तोष, चैन सब जाता रहा है। दिनका हँसना बोलना उड़ गया, रात की नींद जाती रही, हर समय इसी चिन्ता में रहती हूं कि मेरे. और मेरे माता-पिता के भाग्य में क्या लिखा है और अन्त में हमारी क्या दशा होने वाली है ?

दुर्गा-आप भय न करें सब अच्छा ही होगा।

चम्पा-वाह, राजकुमारी जी आप इतनी विदुषी ज्ञानवती होकर स्वप्न में देखी हुई बातों की चिन्ता करती हो।

चन्दनबाला-चिन्ता की बात नहीं, वह स्वप्न ऐसा ही भयानक है कि मेरी जगह यदि पुरुष भी होता तो उसका यही हाल होता। मैं सत्य कहती हूं, जिस समय मुझे उन स्वप्नोंका ध्यान आता है, कलेजा कांपने लगता है और संसार में चारों ओर मुझे अन्धकार ही अन्धकार दिखाई देता है।

दुर्गा-आखिर वह कैसे स्वप्न हैं; जरा हम भी तो सुनें।

चम्पा-हां, हां, सुनाइये और अवश्य सुनाइये।

चन्दनबाला-मेरी अच्छी सहेलियो तुम उसे न सुनो !

दुर्गा-कारण ?

चन्दनबाला-कारण येही, कि तुम दोनों मुझ से जितना प्रेम करती हो वह मैं अच्छी तरह जानती हूं। इस लिये जिन

स्वप्नों को देख कर मेरी यह दशा हो रही है उनको सुन कर तुम मुझ से भी अधिक दुःखी हो जाओगी, और इस बात को मैं धर्म के अनुसार अच्छा नहीं समझती कि दूसरों को भी विना कारण अपना सा दुःखी वनाऊं ।

चम्पा—अच्छे मनुष्य दूसरों को भी अच्छा समझते हैं। यह आप की कृपा और मन की वड़ाई है जो हम दासियों का इतना मान वढ़ाती हैं। परन्तु राजकुमारी जी हम आपकी दासियां हैं हमारे जीवन का सवसे वड़ा कर्तव्य ये है कि जहां तक वन पड़े आपका दुःख दर्द मिटाने का उपाय करें, इस प्रकार हम आपसे हाथ जोड़ कर प्रार्थना करतीं हैं कि जव आप अपने सुखों में हमको वरावर का शरीक समझती हैं तो दुःखों में भी हमें अपना शरीक वनाइये ।

किया है चैन जव हमने, तो दुःख भी हम उठायेंगे ।
न होगा और कुछ हमसे, तो जीवन ही गँवायेंगे ॥
पला है आपके भोजन के, टुकड़ों से वदन अपना ।
यह सवकुछ आपही का है, न तन अपना न मन अपना ॥

चन्दनवाला—अच्छा, नहीं मानती हो तो सुनो, कभी देखती हूं कि जङ्गल की तरफ से एक वहुत वड़ा अजगर आया और मुझे निगल गया, कभी देखती हूं कि राजमहलों के चारों तरफ आग लगी हुई है, कभी देखती हूं कि लहू का सागर वह रहा है, और मेरे माता पिता उसमें डूव रहे हैं। वह हरचन्द अपने वचाव का यत्न करते हैं किन्तु उस समय

कोई मनुष्य उनकी सहायता को नहीं पहुंचता । प्यारी सखियो ! जब कोई मनुष्य और फिर एक निर्बल अबला स्त्री हर रात ऐसे ही डरावने स्वप्न देखे तो तुम्ही न्याय करो कि उसके मन में शान्ति और सुख उत्पन्न होंगे, या डर और भय ?

चम्पा–आपका यह कहना ठीक है, परन्तु राजकुमारी जी दासी इन स्वप्नों का कारण समझ गई और अच्छी तरह समझ गई।

दुर्गा–बहन चम्पा ! तुम क्या कह रही हो ?

चम्पा–मैं जो कुछ कह रही हूं ठीक कह रही हूं ।

चन्दनबाला–क्या मेरे इन स्वप्नों का कोई ख़ास कारण है ?

चम्पा–है ! और अवश्य है !

चन्दनबाला–फिर इसका इलाज ।

चम्पा–बहुत ही सहल।

चन्दनबाला–मेरी अच्छी चम्पा मुझे वह इलाज बतादे ।

चम्पा–घबराइये नहीं मैं इन स्वप्नों का कारण और इलाज दोनों बातें बतादूंगी किन्तु पहले आप इस बात का वचन दें कि मेरी बात सुन कर क्रोध और गुस्सा तो नहीं करेंगी।

दुर्गा–आश्चर्य बहुत और बड़ा आश्चर्य भला संसार में कौन मनुष्य ऐसा होगा जो अपने लाभ की बात सुन कर प्रसन्न होने के बदले उल्टा क्रोधित होगा ।

चम्पा–अरी युवती क्या तूने नहीं सुना कि सत्य बात सब को कड़वी मालूम होती है ।

दुर्गा–आखिर वह ऐसी कौन सी बात है ?

चम्पा–वह बात ऐसी है कि एक हमारी राज कुमारी जी क्या जिससे भी कहोगे उसे बुरा मालूम होगा परन्तु थोड़ी देर के लिए और वह भी हमें तुम्हें दिखाने के लिए किन्तु इस बात को सुनकर मन में कितना सुख और आनन्द प्राप्त होता है इस का हाल वही जान सकता है ।

चन्दनबाला–बस बस मैं समझ गई !

चम्पा–आप क्या समझ गई ?

चन्दनबाला–यही कि तुम दोनों को मेरी बातों का विश्वास नहीं हुआ इस कारण मेरा ठठ्ठा उड़ाना चाहती हो ?

चम्पा–(हाथ जोड़ कर) नहीं राज कुमारी जी ईश्वर की सौगन्द यह बात नहीं मैं ठट्ठा नहीं कर रही किन्तु जो कुछ भी इस समय कह रही हूँ वह सत्य कह रही हू । बड़े बूढों की कहावत है कि मनुष्य दिन के समय जैसी भली या बुरी चिन्ताओं में फसा रहता है रात के समय नींद की हालत में उसे वही बातें स्वप्न में दिखाई देती हैं । दूसरा कारण यह भी होता है कि जब मनुष्य अकेला होता है तो उस के मन में तरह२ की भावनाएं उत्पन्न होती हैं वही भावनाए उसे स्वप्न में दिखाई देती है ।

चन्दनबाला–यदि यह बातें सत्य मान भी ली जाएँ तो भी मुझ से ऐसी बातों का वास्ता ?

चम्पा–वास्ता, यही कि आप को लिखने पढ़ने का बहुत शौक़ हैं,

दिन भर आप पुस्तकें ही पढ़ती रहती हैं, उन पुस्तकों में अनेक प्रकार की बातें होती हैं ! कहीं आप ने किसी युद्ध या अग्नि का हाल पढ़ा होगा, बस वही बात आप के मस्तक में समा गई । जो स्वप्न में दिखाई दीं ।

चन्दनबाला–फिर इसका उपाय ?

चम्पा–मैं बताऊँ ?

चन्दनबाला–हाँ हाँ तुम बताओ !

चम्पा–इधर देखिये, ये भौंरा जो इस कमल के फूल पर मडला रहा है इसका कारण जानती हो ?

चन्दनबाला–नहीं,

चम्पा–यह इस पर मोहित हो गया है !

चन्दनबाला–फिर ?

चम्पा–फिर यही कि जब तक कोई भौंरा (राज कुमारी के कपोलों की तरफ़ संकेत करके) इन फूलों पर मोहित नहीं होता, उस समय तक आप को ऐसे ही डरावने और भयानक स्वप्न दिखाई देंगे ।

चन्दनबाला–(बिगड़ कर) मुझे ऐसी बातें अच्छी नहीं मालूम होतीं मैं तो पहले ही कह रही कि तुम दोनों मेरी बातों को झूट समझ कर मेरा ठट्ठा उड़ाना चाहती हो ।

दुर्गा–राज कुमारी जी परमात्मा की सौगन्द, जो मुझे ज़रा भी यह बात मालूम हो, सारी शरारत इसी की है ।

चम्पा–मैं तो पहले ही कहती थी कि सच्ची बात सब को बुरी मालूम होती है !

दुर्गा–अरी वाहरी वातुर, बड़ी सच्ची बात कही ।

चम्पा–क्यों इस में झूट ही क्या है ? क्या राजकुमारी जी की अवस्था अट्ठारह वर्ष की नहीं हो गई ।

दुर्गा–होगई और अवश्य होगई ।

चम्पा–जब इसी अवस्था में विवाह न हुआ तो क्या बुढ़ापे में होगा ।

चन्दनबाला–तुमने फिर वही निकम्मी बातें शुरू कीं ।

चम्पा–जी हां ! यह ऐसी ही निकम्मी बातें हैं जिनको सुनकर और तो क्या कहूं किन्तु आपका मन कमल के फूल के समान खिल उठा होगा । मैं आज ही भोजन के समय महारानी जी से कहूंगी कि शीघ्र ही हमारी राजकुमारी जी का विवाह होना चाहिए, कारण यही कि वह रात के समय निद्रावस्था में बुरे २ स्वप्न देखकर डरती हैं ।

दुर्गा–क्योंरी, छैला, इन स्वप्नों का विवाह से क्या सम्बन्ध ?

चम्पा–वहुत बड़ा सम्बन्ध, धर्म्म और वैद्यक की बड़ी २ पुस्तकों में स्पष्ट लिखा है कि इस उम्र में पहुंच कर पुरुष हो या स्त्री दोनों के रक्त में एक ख़ास तरह का उफ़ान पैदा होता है, बैठे २ घबराहट होती है मन में अनेक प्रकार के विचार उत्पन्न होते हैं ! रातों को सोते सोते चौंक पड़ते हैं, जब ऐसी

बातें मालूम हों तो माता पिता का कर्तव्य है कि वह उनका विवाह करदें, विवाह से यह फायदा होता है कि एक का दूसरे की बातों से दिल बहल जाना है लहू का वह उफान कम हो जाता है। मन और मस्तक दोनों को शान्ति और सुख मिल जाता है।

चन्दनबाला—(और ज़्यादा बिगड़ कर) देखोजी मैं फिर कहे देती हूं कि यदि अब ऐसी बातें करोगी तो मैं यहां से चली जाऊंगी।

चम्पा—अजी वाह ! इसमें बिगड़ने की क्या बात है, क्या आप कभी विवाह न करेंगी ? क्या विवाह कोई गाली है जिससे आप इतना चिड़ती हैं।

गाना ।

चंदनबाला—नहीं भाती मुझे यह छेड़खानी, क्यों सताती हो।
तुम्हारा क्या लिया है मैंने, क्यों मुझको जलाती हो॥

चम्पा—खुशी से खिलउठा मन, आगई गालों पै भी लाली।
अजी रहने भी दो बेअर्थ, क्यों बातें बनाती हो॥

दुर्गा—वह होंटों पर हँसी आई, वह आंखें झुक गईं देखा ?
जो मन में है तुम्हारे, दासियों से भी छुपाती हो॥

चंदनबाला—चलीजाऊंगी मैं अबकी, जो छेड़ोगी मुझे सखियो !

च० और दु०-परंतु यह तो कहती जाओ क्या शर्मा के जाती हो॥

चन्दनबाला—नहीं भाती मुझे यह छेड़खानी ....॥

(सब जाती हैं)

मनोरंजन

अङ्क १ दृश्य ४

महाशय रतनलाल का मकान

(महाशय रतनलाल की चड़चड़ी और बदमिज़ाज स्त्री कमलावती का प्रवेश)

गाना

कमलावती–अनेक दुःख हैं इन्हें किस तरह उठाऊं मैं ।
कहां तक अपनी जवानी युंही गंवाऊं मैं ॥
जो दिल पै बीत रही है वह कोई क्या जानें ।
कहानी दुःख भरी अपनी किसे सुनाऊं मैं ॥
जला दिया मेरा तन मन विरह की अग्नि ने ।
कोई बताये तो क्यों कर इसे बुझाऊं मैं ॥
दया की जिस से थी आशा वह निर्दई निकला ।
तड़प तड़प के यह जीवन न क्यों विताऊं मैं ॥
नहीं है इसके सिवा अब कोई यतन ऐ "नाज़" ।
कि अपने साथ में औरों को भी रुलाऊं मैं ॥

हाय ! हाय ! क्या करूं और क्या न करूं माता पिता ने न जाने क्या समझ कर इस निखट्टू के पल्ले मुझे बांध दिया इसकी तो वही कहावत है "काम का न काज का सेर भर अनाज का" तड़का होते ही बग़ल में पुस्तक दबाई और

निकल खड़ा हुआ, घर में आते ही "भोजन लाओ" "भोजन लाओ" की चीख़ पुकार, फिर फुलका कच्चा रह गया, दालमें पानी बहुत है, सागमें नमक ज़्यादा पड़ गया, एक स्वांस में पचासों बातें, जब देखो गाली गलौच डांट डपट, घुड़की झिड़की, मानों सीधे मुंह बात करना ही नहीं जानता मैं धर्म और शास्त्र के अनुसार ब्याही हुई स्त्री हूं या इसके बाप दादा की दासी, जो प्रति दिन इसी प्रकार की बातें सुना करूं बस बहुत हो चुकी आज से मैंने भी यह ठान ली है कि वह मुआ एक कहेगा तो मैं दस सुनाऊंगी, वह मारने को लकड़ी उठाएगा तो मैं झाड़ू संभालूंगी यदि वह एक पंडित का पुत्र है तो मैं भी एक पंडितानी की पुत्री हूं वह अपने नाम का महाशय है तो मैं भी अपने नाम की महाशनी हूं।

महाशय रतनलालजी बग़ल में पोथी पत्रा दबाए एक हाथ
से माला जपते और दूसरे हाथ की उंगलियों
से कुछ हिसाब लगाते हुए आते हैं
कमलावती छिपकर देखती है.

म० रतनलाल–कुम्भ–वृश्चिक–कर्क–कन्या–तुला–मिथुन–सिंह वृष–मकर–मीन–मेख–धन, ओहो! अन्त में धन हां, हां, धन वाहरे मैं और वाहरे मेरा भाग अन्त में धन!

कमलावती–(एक तरफ होकर) ये आज इसे क्या हो गया है जो बहकी बहकी बात कर रहा है।

म० रतनलाल-विद्वानों की लिखी हुई पुस्तकें झूठी हो सकती हैं धर्म के बताये हुए नियम और देवताओं के बनाये हुए शास्त्र ये सब झूटे हो सकते हैं परन्तु नहीं हो सकता तो, महाशय रतनलाल जी का लगाया हुआ हिसाब कदापि झूठा नहीं हो सकता।

कमलावती-(आड़ में से) लो और सुनो, कैसे बेअर्थ शब्द मुंह से निकाल रहा है।

म० रतनलाल-आज तड़के ही तड़के जब मैं घर से निकला तो पहले मेरी सीधी आंख फड़की और साथ ही सीधा स्वर भी चलने लगा थोड़ा दूर गया था कि सामने से भङ्गी आता हुआ दिखाई दिया परन्तु उसके पीछे पीछे एक नकटा पुरुष भी आ रहा था और इस समय जैसे ही मैंने घर के द्वारे में पांव रक्खा कि हाथ की हथेली और साथ ही सिर की चँदिया खुजलाई समझ गया, बिलकुल समझ गया और अच्छी तरह समझ गया कि आज कहीं न कहींसे अवश्य धन मिलेगा किन्तु जरा दुःख उठाने के बाद, ओह! चिंता करने की कुछ ज़रूरत नहीं, दुःख उठाना पड़े या कष्ट परन्तु धन मिले धन "भज कलदारम् भज कलदारम्"

कमलावती-(आड़ में से) धन तो मिलेगा जब मिलेगा किन्तु थोड़ी देर में खोपड़ी पर जूते अवश्य पड़ने वाले हैं।

म० रतनलाल-हिन्दू जाति में सब से उत्तम और बड़ी पदवी किस की? ब्राह्मण देवता की? और ब्राह्मण भी कौन ब्राह्मण

कुलीन ब्राह्मण, आहा ! परमात्मा ने ब्राह्मण का भाग भी कैसा विचित्र बनाया हैं कि बड़े २ क्षत्री शूरवीर और महा पुरुष इसके चरणों में अपना शीश नवाते हैं। ब्राह्मण देवता को न कमाने की चिंता और न चाकरी की आवश्यकता, घर बैठे दोनों समय मोहन भोग के ग्रास निगल लीजिये और दान दक्षिणा से घर के सारे भांड़े वर्तन भर लीजिये इस संसारमें जन्म लेते समय बहुतेरा ही परमात्मा ने ज़ोर लगाया सारे देवतओं और देवियों ने समझाया कि मैं किसी वैश्य अथवा शूद्र के घर जन्म लेलूं परन्तु मैं भी अपनी हठ का एक ही था, किसी की बात न सुनी और ब्राह्मण देवता के घर में जन्म लेकर ही रहा। क्या मैं ऐसा मूर्ख था जो किसी दूसरी जाति में जन्म लेकर समस्त जीवन दुःख उठाता और कष्ट भोगता। प्रिय बन्धुओ ! तुम्हीं न्याय करो कि जो आनन्द और सुख एक ब्राह्माण के भाग्य में है क्या वह किसी दूसरे मनुष्य को प्राप्त हो सक्ता है ? कदापि नहीं।

द्रव्यं कमलं नलिनं सरोज़ं सरसी रुहम्।
गणिका लंजिका पगलं रुपा जीवास्य संतिमम्॥

"भज कलदारम् भज कलदारम्"

(कमलावती आड़ में से निकलकर पीठ पर एक दौहत्तड़ जमाती हैं)

कमलावती–मुए भज कलन्दारम के पुत्र यह तो बता तड़के का गया, गया, अब आया हैं इस समय तक तू कहां था और क्या कमाकर लाया और यह पगलम् बगलम् का कौन सा राग अलाप रहा है ?

म० रतनलाल–अरी ओ पगलम् की बच्ची क्या अपने पति का इसी प्रकार स्वागत करते हैं यह तेरा दोहत्तड़ था अथवा भीम की गदा, जिसने मेरी कमर की एक एक हड्डी हिला दी वह तो मैं ही था जो इस चोट को सहन कर गया, कोई और होता तो अब तक कभी का परलोक सिधार गया होता।

कमलावती–वाह रे मर्दुए तेरा नखरा एक स्त्री के कमर पर हाथ रख देने से हड्डी २ हिल गई यदि मैं एकआध लट्ठ जमा देती तो कचूमर ही बन जाता।

म० रतनलाल–क्या कहा ? 'लट्ठ जमा देती' बाप रे, यह स्त्री है या राक्षसी यह तो बता तू एक पंडित की पुत्री और एक पंडित की स्त्री होकर क्षत्राणी कब से बन गयी ?

कमलावती–जब से तूने घर में रहने और कमाने धमाने को तिलांजली देदी।

म० रतनलाल–मेरे बाहर फिरने और कमाने न कमाने से तुझे मतलब ?

कमलावती–मतलब क्यों नहीं, क्या मैं तेरी पत्नी और इस घर की मालकन नहीं हूं ?

म० रतनलाल—अवश्य है।

कमलावती—यदि तू इसी प्रकार फिरता रहेगा और कुछ कमाई करके न लाएगा तो खाने पहनने को कहां से आवेगा।

म० रतनलाल—पण्डित को इसकी तो चिन्ता ही न करनी चाहिये ईश्वर की कृपा से ब्राह्मण देवता कभी भूके और नंगे नही रह सक्ते।

कमलावती—कारण?

म० रतनलाल—कारण पूछ कर क्या लेगी? तुझे आम खाने से मतलब है या पेड़ गिनने से? बता आज क्या भोजन बनाया है जल्दी ला मुझे बड़ी ही भूक लगी है "भज कलदारम् भज कलदारम्।"

कमलावती—मैंने तो आज कुछ भी नहीं बनाया।

म० रतनलाल—क्यों नहीं बनाया?

कमलावती—बनाती कहां से घर में एक पैसा तक तो था ही नहीं।

म० रतनलाल—ओह! परमात्मा ऐसा अन्धेर! (कमलवती से) कल ही तो मैंने तुझे पांच रुपये लाकर दिये थे क्या वो समस्त रुपये तूने खर्च करडाले। भजकलदारम् भजकलदारम्

कमलावती—और नहीं तो क्या मैंने तजूरी में बन्द करके अगले जन्म के लिये रख छोड़े हैं कल रात्री के समय हलवा पूरी जो खाई थी।

म० रतनलाल–तो क्या पांचों रुपये इसमें उठ गये ?

कमलावती–नहीं एक रुपया उठा था।

म० रतनलाल–और बाक़ी चार रुपये कहां गये ?

कमलावती–गये कहां ! मैंने आज उन रुपयों की अपने लिये एक साड़ी मोल लेली।

म० रतनलाल–(मुंह बना कर) मैंने साड़ी मोल लेली ! अच्छा यह बता, अब खायें कहां से ?

कमलावती–ब्राह्मण देवता खाने पहिनने की चिन्ता नहीं करते।

म० रतनलाल–क्यों नहीं करते क्या वो जीवन नहीं रखते।

कमलावती–मैं क्या जानूं तुम्हीं तो अभी कह रहे थे कि ब्राह्मण देवता को इसकी चिन्ता नहीं होती।

म० रतनलाल–परन्तु इसका यह अर्थ कहां से निकला कि पण्डित को भोजन की इच्छा ही नहीं होनी।

कमलावती–फिर क्या अर्थ हुआ ?

म० रतनलाल–'पगली' इसका यह अर्थ है कि पण्डित को ईश्वर की दया और उसके उपकार पर विश्वास रखते हुए संसार की चिन्ताओं को अपने पास भी न फटकने देना चाहिये। "भज कलदारम् भज कलदारम्"

कमलावती–आज तुम भी ऐसा ही करके देखो।

म० रतनलाल–(एक तरफ होकर) हाय हाय यह तो आज

भूका मार कर मेरे प्राण लेना चाहती है (कमलावती की ओर देख कर बड़े ही प्रेम से) प्रिये बस दिल्लगी हो चुकी जल्दी से भोजन लाओ और किसी प्रकार की चिन्ता मत करो देखो तो सही आज तुम्हारे घर में "हुन" की वर्षा होगी, वर्षा।

कमलावती—यह तो बड़ी ही अच्छी बात है 'देखो प्राणनाथ जिस समय "हुन"की वर्षा हो तो वो समस्त "हुन" तुम अपने पास रख लेना और उसमें से एक रुपये की पूरी कचौरी मोल ले आना हम तुम दोनों बड़े आनन्द के साथ पेट भर कर खायेंगे, और रात के लिये भी दो चार पूरियां रख छोड़ेंगे क्यों ठीक है ना ? "भज कलदारम् भज कलदारम्"

म० रतनलाल—लो और सुनो रांड की बातें, पत्नी होकर पति का मखौल करती और मेरी बातों को असत् जानती है मैं सत्य कहता हूं कि आज का शगुन बड़ा ही उत्तम और आज का दिन बड़ा ही भागवान हैं और साथ ही मेरे लगाये हुए हिसाब से भी यही प्रगट होता है कि आज कहीं न कहीं से अवश्य ही हमें बड़ा लाभ होगा।

कमलावती—निश्चय तुम ऐसे ही विद्वान और ज्ञानी हो ना ?

म० रतनलाल—तो क्या तुझे मेरे विद्वान और ज्ञानी होनेमें भी कुछ सन्देह है।

कमलावती—सन्देह कैसा ? मुझे तो पूरा पूरा विश्वास है।

म० रतनलाल-किस बात का।

कमलावती-इस बात का कि तुम पक्के मूर्ख और अज्ञानी हो।

म० रतनलाल-एक पण्डित का ऐसा अपमान स्त्री के हाथों पुरुष का ऐसा अनादर क्या करूं कोई ब्राह्मण होता तो अभी तुझे शास्त्रार्थ करके बता देता कि मैं कैसा विद्वान हूं।

कमलावती-विद्वान होते तो पगलम् बगलम् और भजकलदारम् के बेतुके राग क्यों अलापते !

म० रतनलाल-क्या ये बेतुके राग हैं ?

कमलावती-और नहीं तो क्या वेद के मन्त्र अथवा गीता के श्लोक हैं।

म० रतनलाल-ये ऐसे मन्त्र हैं कि जो पुरुष और स्त्री इन्हें सिद्ध करलें वह जीवन के अन्त तक कदापि किसी प्रकार का दुःख न भोगे 'यह इसी मन्त्र का कारण है कि म० रतनलाल जो मेहनत मजदूरी और किसी की चाकरी किये बिना दोनों समय मोहन भोग उड़ाते हैं। "भज कलदारम् भज कलदारम्"

कमलावती-ईश्वर जिजमानों का भला करे, वोह एक ब्राह्मण का पुत्र और घर का पुराना पुरोहित समझ कर दान दक्षिणा देते रहते हैं यदि दो दिन खाने को न मिले तो आटे दाल का भाव मालूम हो जाय और मन्त्र वन्त्र सब रक्खा रहजाय।

(सेठ मूलचन्दजी का नौकर 'गोपाला' द्वारे पर आकर पुकारता है)

गोपाला-महाशय रतनलाल जी घर के भीतर विराजमान हों तो

उनके पवित्र चरणों में सेठ मूलचन्द जी के विद्वान और ज्ञानी चाकर शूरवीर गोपाला का प्रणाम् पहुंचे और वोह न हों तो देवी पण्डितानी जी को बहुत २ नमस्कार।

म० रतनलाल–कौन! गोपालसिंह।

गोपाला–जी गोपालसिंह नहीं 'गोपाला'

म० रतनलाल–अच्छा अच्छा, शूरवीर गोपाला भीतर आजाओ।

गोपाला–जो आज्ञा।

म० रतनलाल–(कमलावती से) अब देख लेना कि मेरे मानने वाले मेरा कितना आदर और सन्मान् करते हैं।

गोपाला–(अन्दर आकर) महाशय महाराज, सेठ जी ने हाथ जोड़ कर प्रणाम् कहा है और प्रार्थना की है कि यदि आपको तकलीफ़ न हो तो थोड़ी देर के लिये पधारिये क्यों कि एक कार्य में आपसे सलाह करनी है।

म० रतनलाल–क्या कार्य है तुम्हें कुछ मालूम है?

गोपाला–इतना जानता हूं कि सिठानी जी की मृत्यु से सेठ जी बहुत उदास हैं और किसी दूसरे विवाह की चिन्ता में हैं।

म० रतनलाल–अच्छा तुम चलो मैं अभी भोजन करके आता हूं भज कलदारम् भज कलदारम्।

गोपाला–जो आज्ञा (जाता है)

म० रतनलाल–(कमलावती से) क्यों देखा मेरे मन्त्रों का बल

मैं तो पहिले ही कहता था कि आज का दिन बड़ा भागवान् है अब क्या है पौबारा हैं एक ही दाव में हज़ार बारह सौ रुपये महाशय रतनलाल जी के हाथ में होंगे, ले अब तो भोजन करादे, घबरा नहीं, आज शाम तक रुपये ही रुपये हो जावेंगे। भज कलदारम् भज कलदारम्।

कमलावती–सारे रुपये मुझे लाकर देना।

म० रतनलाल–हां हां सब तुझी को दूंगा।

(जाना)
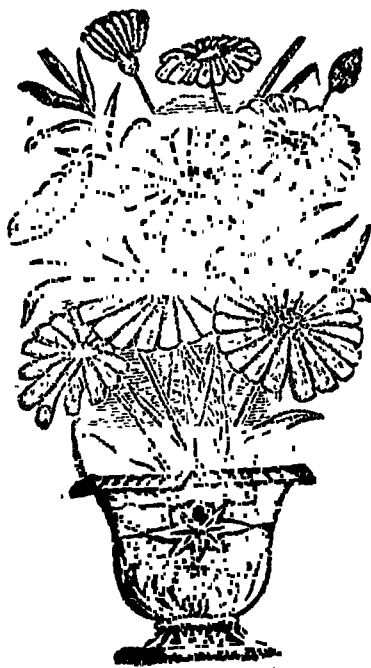
अङ्क १   दृश्य ५

कुण्डलपुर का राजभवन।

[भगवान् महावीर स्वामी गृहस्थाश्रम को त्यागकर सन्यास धारण करने का विचार करते हैं और उनके ज्येष्ट भ्राता महाराजा नन्दिवर्द्धनजी समझाते हैं]

भगवान् महावीर—क्या जलसे भरे हुए अथाहसागर में कूदकर यह विचार कर लेने से कि हम तैरना नहीं जानने पर भी डूब नहीं सकते, किनारे पर पहुंच सकते हैं? जलती हुई अग्नि में प्रवेश करके अपने मनमें यह समझ लेने से कि हमारे स्वासों की हवा से यह बुझ जायगी, वोह अग्नि बुझ सकती है? संसार में रहकर गृहस्थाश्रम के मज़े उड़ाते हुए यह आशा रखना कि हमें अवश्य मुक्ति प्राप्त होगी, ठीक हो सकता है? नहीं और कभी नहीं। प्राचीन समय में श्रीऋषभादि जो तीर्थंकर हुए हैं उनकी आयु बहुत होती थी, इसलिये उन्होंने सब कुछ कर लिया और उसको छोड़कर जो कुछ भी वह चाहते कर सकते थे। परन्तु दुःख तो इस बात का है कि आजकल के मनुष्य यह जानते हुए भी कि हमारी आयु बहुत थोड़ी है न कुछ कार्य करते हैं और न करना चाहते हैं। सच पूछो तो इस संसार में हित की इच्छा रखने और थोड़ी आयु वाले पुरुषों को सम्यक्चारित्र के बिना एक पल भी वृथा न

जाने देना चाहिये। जो थोड़ी आयु पाकर भी तपस्या के विना अपने जीवन को व्यर्थ ही गँवा देते हैं वह अन्त में दुःख ही दुःख भोगते हैं। जब कभी स्वयम् मैं सोचता हूं कि मुझे संसार में जन्म लिये हुए २८ वर्ष हो गये किन्तु इस समय तक मैंने अपने उद्धार का क्या उपाय सोचा ? उस समय मेरे हृदयको असह्य वेदना होने लगती है कि मैं तीन ज्ञानरूपी नेत्रवाला इस संसार की प्रत्येक वस्तु को नाशवान समझने वाला होकर भी अज्ञानियों की तरह संयम के विना गृहस्था-श्रम रूपी दलदल में फंसकर व्यर्थ ही अपना जीवन गवां रहा हूं। धिक्कार है उस जीवन पर जो तीन ज्ञान रखते हुए भी अपने को इस मायाजाल से न छुड़ा सका। वास्तव में ज्ञान पाने का उत्तम फल उन्हीं पुरुषों को प्राप्त होता है, जो मोहा-न्धकार का नाश करके जैनेश्वरी दीक्षा धारण करते हैं। जिस प्रकार नेत्रवाला मनुष्य कुएं में गिर पड़े तो उसके नेत्र व्यर्थ हैं, उसही प्रकार जो मनुष्य ज्ञानी होकर मायाजाल में फँस जाय तो उसका ज्ञान पाना भी किसी काम का नहीं। अज्ञानता से यदि कोई पाप हो जाय तो सम्भव है उससे सहज में छुटकारा मिल जाय, किन्तु जान बूझकर जो पाप-कर्म किये जायं उनसे क्या छुटकारा मिल सकता है ? हर-गिज़ नहीं। अतएव ज्ञानी पुरुषों को विषय वासनाओं में फँसने के लिये मोह जैसा निन्दनीय कर्म नहीं करना चाहिये क्योंकि मोह से राग, द्वेष, और राग, द्वेष से घोर पाप

होते हैं तथा पापों के कारण दुर्गतियों में जन्म लेकर अनेक दुःख सहन करने पड़ते हैं।

हज़ारों बार आएंगे, हज़ारों बार जाएंगे।
कभी संसार के चक्कर से छुटकारा न पायेंगे॥
यहां के चैन, सुख, सम्बन्धसे मुंह मोड़ना होगा।
यदि मुक्तिकी इच्छा है तो सबको छोड़ना होगा॥

(महाराजा नन्दिवर्द्धनजी का प्रवेश)

नन्दिवर्द्धनजी–मैं तुम्हें कई दिनों से हर समय उदास और किसी गहरी चिन्ता में मग्न देखता हूं. तुहारे कमल के समान कोमल हृदय को क्या दुःख पहुंचा है? यदि बता सकते हो तो मुझे अवश्य बताओ। मेरे प्यारे भ्राता! मैं अपने ऊपर पड़े हुए अनेक दुःखों को बड़ी सरलता से सहन कर सकता हूं, परन्तु तुम्हारे दुःख को देखने की मुझमें सामर्थ नहीं।

भगवान् महावीर–मैं जानता हूं कि आपको मेरे साथ इतना ही प्रेम है परन्तु मेरा दुःख संसारी मनुष्यों का सा नहीं है जो वैद्यों की औषधि तथा कुटुम्बियों की दौड़-धूप से जा सके।

नन्दिवर्द्धनजी–तुम्हारे शब्दों ने तो मुझे और भी आश्चर्य में डाल दिया क्या संसार में कोई ऐसा भी दुःख हो सकता है जिसका कोई उपाय न हो?

भगवान् महावीर-महाराज मैं यह नहीं कहता कि मेरे दुःख का कुछ उपाय है ही नहीं, नहीं नहीं, उसका उपाय है और अवश्य है। परन्तु जरा कठिन है।

नन्दिवर्द्धन जी-कठिन है तो इसकी चिन्ता न करो, मुझे केवल इतना मालूम हो जाना चाहिये कि तुम्हें क्या दुःख है? और उस दुःख के दूर करने का क्या उपाय है? इसके बाद उस दुःख को दूर करना मेरा कर्तव्य है। मैं इसके लिये अपना तन, मन, धन सब कुछ अर्पण करने को तय्यार हूं।

भगवान महावीर-इन बातों से वह दुःख दूर नहीं हो सकता, इस पर भी आप सुनना ही चाहते हैं तो सुनिये मैं हर घड़ी इसी चिन्ता में रहता हूं कि यदि इस संसार में जन्म लेने का अर्थ यही है कि अच्छे २ भोजन खायें और अच्छे २ वस्त्र पहिनें, विवाह करके गृहस्थ जीवन का पूरा २ सुख उठाएं और समय आने पर मर जाएं तो यह समस्त बातें पशुओं में भी पाई जातीं हैं फिर एक मनुष्य और एक पशु के जीवन में क्या अन्तर रहता है?

नन्दिवर्द्धन जी-इसका तात्पर्य ?

भगवान महावीर-तात्पर्य यही कि हम जो ऐसा समझ रहे हैं यह हमारी भूल है मनुष्य के जन्म लेने का कारण कुछ और ही है, उसी कारण का पता लगाना हमारा सब से बड़ा कर्तव्य है। क्यों कि जब तक हम उस कारण की

खोज न करेंगे, तो कदापि हमारा जीवन सुफल न होगा।

नन्दिवर्द्धन जी–निश्चय ऐसा ही है, परन्तु इसके लिये इतनी चिन्ता की क्या आवश्यकता है? अरिहंत देव के उपदेशानुसार चलने से यह सब कुछ हो सकता है।

भगवान महावीर–हो सकता है और अवश्य हो सक्ता है, किन्तु गृहस्थाश्रम में रह कर नहीं।

नन्दिवर्द्धन जी–फिर क्यों कर?

भगवान महावीर–संसार के समस्त बाह्य और अन्तरंग आडम्बरों को त्याग कर सम्यक् दर्शन, सम्यक् ज्ञान और सम्यक् चारित्र रत्नत्रय का पालन करके।

नन्दिवर्द्धन जी–(घबरा कर) तुम! तुम!! यह क्या कहते हो?

भगवान महावीर–धीरज रखिये, महाराज धीरज रखिये, पहले आप यह बताइये कि राजा अपनी प्रजा की, पिता अपने पुत्र की भलाई चाहता है या बुराई।

नन्दिवर्द्धन जी–जो राजा अपनी प्रजा की भलाई न चाहे वह वास्तव में राजा नहीं चाण्डाल है, राक्षस है। इसी तरह जो पिता अपने पुत्र की भलाई न चाहे वह किसी प्रकार पिता कहलाने का अधिकारी नहीं।

भगवान महावीर–अच्छा एक बात और बताइये आप मेरा दुःख मिटाना चाहते हैं?

नन्दिवर्द्धन जी—अवश्य ।

भगवान महावीर—अच्छा सुनिये ! आप राजा हैं और मैं प्रजा हूं ज्येष्ठ भ्राता होने के कारण इस समय आप मेरे पिता के समान हैं। इसलिये धर्म शास्त्र और राजनीत्यानुसार मैं आपसे प्रार्थना करता हूं कि आप मेरा हित चाहते हैं तो कृपा करके मुझे आज्ञा दीजिये कि मैं राजपाट और संसार के झगड़ों को त्याग कर जैनेश्वरी दीक्षा लेकर आत्मकल्याण करूं ।

नन्दिवर्द्धन जी—प्यारे भाई अभी बहुत दिन नहीं हुए कि माता. पिता का स्वर्गवास हो गया हैं, और इस समय तुमने दीक्षा लेने का निश्चय कर लिया है। यह किसी प्रकार उचित नहीं है। एक साथ में दो २ विछोह सहन नहीं कर सकता, इस लिये मुझे, जो पहिले से दुःखी हो रहा हूं और अधिक दुःखी न बनाओ ! तुम्हारे सिवाय मेरा और कोई सहोदर नहीं जिसके साथ में कुछ मन्त्रणा कर सकूं तथा अपने दुःखों को सुना सकूं।

उधर महलों में शोभा, इस तरफ दर्बार में शोभा ।
तुम्हारे दम से है इस राज की संसार में शोभा ॥
तुम्हीं शक्ती तुम्हीं बल हो, तुम्हीं इसका सहारा हो ।
अगर मैं राज की आंखें तो तुम आंखों का तारा हो ॥

भगवान महावीर—आपका कहना सत्य है, परन्तु महाराज ये

सारे सम्बन्ध इस जीवन के साथ हैं जो आंख बन्द होते ही समाप्त हो जाते हैं। इसलिये मैंने इस मोह माया को छोड़ने का दृढ़ संकल्प कर लिया है क्यों कि बग़ैर मोहनीय कर्म के नाश किये यह जीव सच्चा सुख प्राप्त नहीं कर सक्ता।

नन्दिवर्द्धन जी—यह सब कुछ तुम राजभवन में रहकर भी कर सक्ते हो क्या गृहस्थाश्रम में धर्म का पालन नहीं हो सक्ता। क्या मुनि वृत्ति ही में विशेष धर्म हो सकता है। क्या जो आत्मा संसार में रहता हुआ भी राग, मोह, काम, कपट और विषयादि त्यागदे वह साधु कहलाने योग्य नहीं है? अवश्य है। इसी प्रकार जो मनुष्य मुनिराज होकर भी रागादि से निवृत्ति नहीं कर सक्ता क्या वह गृहस्थाश्रम का त्याग करने मात्र से ही साधु बनसक्ता है? कदापि नहीं। इस लिये मेरे ऊपर कृपा करके समता भाव से गृहस्थाश्रम में रहकर ही जीवन बिताओ।

बड़ाई इसमें हैं जङ्गल के बदले, घर में पाओ तुम।
जो औरों से न अबतक होसका वह कर दिखाओ तुम॥
बचा सक्ते हो अपने धर्म को, दुनियां में रह कर भी।
कमल ही को न देखो, जल के अन्दर भी हैं बाहर भी॥

भगवान महावीर—पूज्य भ्राता जिस प्रकार एक ऐसे मैदान में जिसमें कहीं जाल बिछे हुए हों, कहीं कांटे पड़े हुए हों, किसी जगह पत्थरों के ढेर हों और कहीं बड़े २ गढ़े हों

किसी अन्धे पुरुष के हाथ में केवल एक लकड़ी देकर उसे वहां छोड़ दिया जाए तो क्या वह किसी नेत्रों वाले की सहायता के विना उस जंगल से ज़िन्दा निकल जायगा? कदापि नहीं। जाल के फन्दों से वच गया तो कांटों में उलझेगा और यदि कांटों से भी वचा, तो पत्थरों से अवश्य ठोकर खाकर गिरेगा। और अन्त में गढ़े तो उसकी जान लेकर ही छोड़ेंगे। इसी प्रकार यह मनुष्य भी जिसके जीवन के साथ २ राग के फन्दे, लोभ के कांटे, कपट के पत्थर और काम के अन्धेरे गढ़े मौजूद हैं सिर्फ बुद्धि के वल से विना तप जप किए मोक्ष को प्राप्त नहीं कर सका और असली तप जप तभी हो सक्ता है जब संसार के समस्त झगड़ों को त्याग दिया जाए। इस लिये क्षमा कीजिये यदि मैं यह कहूं कि मैं आपकी इस आज्ञा का पालन करने से मजबूर हूं।

नन्दिवर्द्धन जी—(उदास हो कर) नहीं मैं तुम्हें मजबूर नहीं करता यह तुम्हारी इच्छा पर निर्भर है।

भगवान महावीर—तो मेरी इच्छा यही है कि आप मुझे तपोवन जाने की आज्ञा दें।

नन्दिवर्द्धन जी—तुमने मेरी पहली वात अस्वीकार करदी परन्तु मुझे आशा है कि मेरी दूसरी वात को तो अवश्य स्वीकार करोगे।

भगवान महावीर—वह क्या?

नन्दिवर्द्धन जी—यही कि ज़्यादा नहीं केवल दो वर्ष तक तुम मेरे पास और रहो क्योंकि अभी माता पिता के मरने का दुःख नहीं भूला हूं दो वर्ष बीत जाने पर जो तुम्हारे मन में है वही करना ।

भगवान महावीर—(गर्दन झुका कर) जो आपकी आज्ञा ।

(दोनों का जाना)

अङ्क १   दृश्य ६

(राजा शतानीक का दरबार)

सहेलियों का नाच गाना

कहो ऐ जैनियो मन में तुम्हारे क्या समाई है ।
यह कैसी फूट है अपनों से किस कारण लड़ाई है ॥
दिगम्बर या श्वेत-अम्बर हो कुछ हो फिर भी जैनी हो ।
गले मिलकर रहो मिलकर ही रहने में भलाई है ॥
हसद झूट और चोरी अत्याचार और मक्कारी ।
तुम्हीं बोलो बड़ाई है कि इस में जग हँसाई है ॥
कभी जिनके सबब संसार में भारत की थी शोभा ।
उसी जिन धर्म की यह दुर्गति तुम ने बनाई है ॥

राजा शतानीक—सेनापति !

सेनापति—महाराज ।

शतानीक–तुम्हारा क्या विचार है ?

सेनापति–अन्नदाता किस मामले में ।

शतानीक–इसी सरहद वाले झगड़े में राजा दधिवाहन हमारी तमाम बातें स्वीकार कर लेगा या युद्ध के लिए तलवार उठाएगा ।

सेनापति--जहां तक मेरा विचार है वह सर झुकाने के बदले तलवार से इसका फैसला करना ज़्यादह पसन्द करेगा ।

शतानीक–यह तुम्हारी भूल है जो ऐसा विचार करते हो वह हरगिज़ ऐसा नहीं कर सकता उसकी इतनी शक्ति नहीं कि राजा शतानीक जैसे बलवान मनुष्य से युद्ध कर सके ।

तीर दिल पर तेग़ मुंह पर गुर्ज़ सर पर झेलना ।
काम हर एक का नहीं इन सब की टक्कर झेलना ॥
कौन ऐसा है कि दूभर जिसको अपनी जान हो ।
वोह लड़े हाथी से उस जैसा ही जो बलवान हो ॥

सेनापति–महाराज सत्य कहते हैं परन्तु आन और लाज पर मरने वाला मनुष्य बल और शक्ति से कभी भय नहीं करता राजा दधिवाहन किसी नीच जाति में नहीं क्षत्रियों के ऊंचे कुल में पैदा हुआ है वह युद्ध में लड़कर प्राण दे देगा किन्तु आन न देगा ।

शतानीक–इसका परिणाम ?

सेनापति—क्षमा कीजिये, महाराज क्षत्री पुत्र युद्ध के समय "इस युद्ध का अन्त में क्या परिणाम होगा ?" इसका विचार नहीं करता उसे केवल इस बात की चिन्ता होतीहै कि उसकी आन और कुल पर कलङ्क का टीका न लगने पावे। अन्नदाता राजा दधिवाहन कैसा मनुष्य है आज्ञा हो तो जो कुछ आपके इस सेवकने उसकी निस्बत सुना है साफ २ अर्ज़ करे।

शतानीक—कहो और अवश्य कहो।

सेनापति—महाराज इस में शक नहीं कि उसका राज हमारे राज से बहुत छोटा है उसकी सेना भी हमारी सेना से थोड़ी और कमजोर है परन्तु जिस प्रकार दधिवाहन एक वीर और सच्चा क्षत्री है उसी प्रकार उसकी सेना का एक २ मनुष्य हमारी सेना के दो दो चार चार मनुष्यों पर भारी है इसके अलावा राजा दधिवाहन ने अपने सच्चे प्रेम और दया के स्वभाव से यही नहीं कि केवल सारी सेना ही के मनों को मोह लिया है बल्कि जहां तक आप के दास को मालूम हुआ है वह यह है कि सेना के अलावा प्रजा का बच्चा बच्चा उसके गुण गाता है।

दया का धर्म का नेकी का पालन हार गिनती है।
वह राजा है मगर प्रजा उसे अवतार गिनती है॥
बड़े छोटे बुरे अच्छे सब उस पर जान देते हैं।
वह पूजा के समय भी तो उसी का नाम लेते हैं॥

शतानीक—इसका तात्पर्य ?

सेनापति—यही कि राजा दधिवाहन से हमारा युद्ध हुआ तो बड़ी भारी मुसीबत का सामना होगा।

शतानीक—क्यों ?

सेनापति—क्योंकि लोहे को लोहे से काटना पड़ेगा।

शतानीक—ऊंह देखा जायगा।

सेनापति—महाराज इसे टालें नहीं बल्कि जो कुछ यह दास अर्ज करता है उसे सुनें और सुनकर उसका उपाय करें।

शतानीक—आखिर तुम्हें इतनी चिन्ता क्यों है क्या राजा दधि-वाहन के नाम से डरते हो ?

सेनापति—अन्नदाता क्षत्री का पुत्र डरने के लिए नहीं बल्कि मरने के लिए इस संसार में जन्म लेता है परन्तु यह पुरानी कहावत है कि अकेला चना भाड़को नहीं फोड़ सकता। आप हों या यह दास उस वक्त तक राजा दधिवाहन का कुछ नहीं बिगाड़ सक्ते जब तक हमारी सारी सेना भी उसकी सेना की तरह निर्भय और वीर न हो। महाराज जब से सेनापति की पदवी मुझे मिली हैं मैं तो प्रति दिन यही देखता हूं कि यों तो हमारी सेना का एक एक मनुष्य अपने आप को रावण और भीष्मपितामह से ज़्यादह बलवान और अर्जुन से बढ़कर धनुर्धारी जानता है परन्तु जब कोई कठिन समय

आ पड़ता है तो इस तरह मुंह छुपाते और जान बचाते फिरते हैं जिस तरह बिल्ली को देखकर चूहे भागते हैं।

शतानीक - यह तो ठीक है फिर भी एक की और दस की बराबरी क्या ? मैं अपनी सेना की इस कमी को इस तरह पूरा कर दूंगा कि राजा दधिवाहन के एक एक सिपाही के मुकाबले में मेरी सेना के दस २ सिपाही होंगे और जिस प्रकार एक टिड्डी को सैकड़ों च्यूंटियां लिपट जाती हैं उसी प्रकार उसके आदमियों को मेरे मनुष्य चिपट जाएंगे।

तलवार और तीर भला क्या चलाएंगे।
दम लेने का समय भी वह दम भर न पाएंगे॥
घिर जायंगे वह आते ही यों मेरी फौज में।
फंस जाय जैसे नाव समुन्दर की मौज में॥

(राजा शतानीक का एलची जो राजा दधिवाहन के पास अपने मालिक का पत्र लेकर गया था वापिस आता है)

एलची- दिन ब दिन इस राज की शोभा बढ़े संसार में।
काट पहले से भी दूना हो तेरी तलवार में।
सूरमा भी सर झुकाकर आए इस दरबार में।
लाभ हासिल हो तुझे इस जंग के व्यवहार में॥
देखकर गुस्सा तेरा दुश्मनका क़िस्सा पाक हो।
तेरे बाहु बल से धरती का कलेजा चाक हो॥

शतानीक-क्यों राजा दधिवाहन ने मेरे पत्र का क्या जवाब दिया ?

एलची–महाराज उस अभिमानी ने कहा, जाओ अपने राजा से कह दो कि राजा दधिवाहन क्षत्री पुत्र है वह इसका उत्तर जवान से नहीं वल्कि तलवार और खांडे से देना चाहता है ।

शतानीक–(क्रोधित होकर) तो क्या वह मुझ से युद्ध करना चाहता है ?

एलची–जी हां ।

शतानीक–अच्छी वात है ! सेनापति !

सेनापति–अन्नदाता ।

शतानीक–जाओ और अपनी तमाम सेना को मेरा यह हुक्म सुना दो कि राजा दधिवाहन के गढ़ पर चढ़ाई है जो इस समय अपने राजा और अपने देश की ख़िदमत करेगा मैं उसको मालामाल कर दूंगा ।

सेनापति–जो आज्ञा ।

शतानीक–च्यूंटी हाथी का मुक़ाविला करती है, गीदड़ शेर के मुंह आता है राजा दधिवाहन और मुझसे युद्ध ! देखा जाएगा ।

पृथ्वी पर खून की धारा वहा दूं तो सही ।
आग बन कर आग पानी में लगा दूं तो सही ॥
जिससे वह फूला हुआ है वह भुला दूं तो सही ।
नाम तक संसार से उसका मिटा दूं तो सही ॥
सूरमाओं का जिगर फट जाय मेरे वार से ।
कांप उठता है जगत तलवार की झनकार से ॥(पटाक्षेप)

अङ्क १   दृश्य ७

राजा दधिवाहन का महल।

राजा दधिवाहन–(टहलते हुए) नहीं हो सक्ता! शेर लोमड़ी के आगे शीश नवाये, हाथी मच्छर के सामने गिड़गिड़ाये, आकाश धरती से मात खाये, समुद्र झील से घबराये, पहाड़ मिट्टी के ढेर से दबजाय, सूरज का चमत्कार चिराग़ की ज्योति से शरमाये एक वीर और क्षत्री पुत्र, किसी निर्दयी और कायर मनुष्य से डर जाय ऐसा इस संसार के अन्त समय तक नहीं हो सक्ता।

अंधेरा रात का दिन के, उजाले पर विजय पाये।
अनी फौलाद की टूटे हुए कांटे से घबराये॥
न हो कुछ खोट जिस सोने में, वह पीतलसे शरमाये।
गधे के रेंकने से शेर की, आवाज़ दब जाये॥
बदल जायें नियम सारे, कभी यह हो नहीं सक्ता।
जो सच्चा वीर है वह, लाज अपनी खो नहीं सक्ता॥

(रानी धारणी का प्रवेश)

रानी धारणी–निश्चय, स्वामी जी! सच्चा क्षत्री अपनी लाज जीवन के अन्त तक नहीं खो सक्ता। परन्तु इस समय लाज की चिन्ता कैसी और आज आप इतनी रात बीत जाने पर भी अकेले यहां क्या विचार कर रहे हैं?

राजा दधिवाहन–जिन बातों के सुनने से तुम्हारे कोमल और नाजुक हृदय को दुःख प्राप्त हो उन्हें पूछकर क्या करोगी ?

रानी धारणी–क्या कहा ? मुझे दुःख प्राप्त होगा और वह भी किस से तुम्हारी बातों से–अपने मालिक, अपने पतिदेव, अपने स्वामी के शब्दों से ?

राजा दधिवाहन–वो बातें ही ऐसी दुःख भरी हैं कि केवल तुम्हीं क्या जो भी सुनेगा वह दुःखी होगा।

रानी धारणी–जब तो मैं सुनूंगी और अवश्य सुनूंगी।

राजा दधिवाहन–कारण ?

रानी धारणी–कारण यही कि धर्म्म और समाज के अनुसार स्त्री अपने स्वामी के दुःख सुख में बराबर की हिस्सेदार है जिस प्रकार जब आप अपने सुख में मुझे हिस्सा देते हैं तो अपने दुःख में भी इस दासी को शरीक कीजिये।

रही हूं आज तक सुख में, तो अब दुःख भी उठाऊंगी।
मैं जग में स्त्री की लाज को, शोभा बढ़ाऊंगी॥
पति सेवा का आज उपदेश, दुनियां को सुनाऊंगी।
बताया है जो मुझको धर्म्म ने, सब को बताऊंगी॥
न अच्छे वस्त्रों से है, न आदर उसका भूषण से।
जो है कुछ मान औरत का, तो है स्वामी के जीवन से॥

राजा दधिवाहन–आहा ! कैसी विदुषी और ज्ञानवती स्त्री है,

जिस तरह इसका सुन्दर मुखड़ा नेत्रों को लुभाने वाला है उसी प्रकार इसका पवित्र हृदय भी प्रेम और मनोहरता की शक्ति से मन को परचाने वाला है।

रानी धारणी-आपने मेरी बात का कुछ उत्तर नहीं दिया।

राजा दधिवाहन-सुन्दरी! क्या उत्तर दूं न तो मेरा मन ही ठिकाने है और न मेरी बुद्धि ही कुछ काम देती है यह बात तो तुम्हें भी अच्छी तरह मालूम है कि 'कौसाम्बी' नगरी का राजा शतानीक मेरे साथ बैर रखता है अतएव उसने बिना कारण सरहद (सीमा) का झगड़ा खड़ा करके मेरे पास एलची भेजा है कि मैं अपनी प्रजा के दो चार निर्दोष मनुष्य जिनका वह नाम बताये और तीन लाख रुपये दण्ड स्वरूप उसको दूं और साथ ही पत्र लिख कर क्षमा मागूं।

रानी धारणी-फिर आपने क्या उत्तर दिया?

राजा दधिवाहन-मैंने उस घमण्डी राजा को साफ़ २ लिख दिया कि एक क्षत्री पुरुष से यह आशा न रखना कि वह किसी कायर और अन्यायी मनुष्य से डर कर बिना अपराध क्षमा मांगेगा, साथ ही यह भी लिख दिया कि तूने जिस प्रकार एक क्षत्री का अपमान किया है उसका उत्तर यदि तू यहां होता तो ज़बान के बदले तलवार से दिया जाता।

रानी धारणी-(हँस कर) अवश्यमेव आपको ऐसा ही उत्तर देना चाहिये था, अब आपको किस बात की चिन्ता और किस चीज़ का भय है जो इतना विचार कर रहे हैं?

राजा दधिवाहन–प्रिये तुम्हें नहीं मालूम कि उस दुष्ट ने मेरा उत्तर सुन कर क्या किया?

रानी धारणी–क्या किया।

राजा दधिवाहन–उसने गुप्त रीति से चम्पापुरी पर चढ़ाई करदी जिस कारण मैं अपनी सेना का कुछ बन्दोवस्त न कर सका। अब मुझे अपनी मृत्यु या राजपाट छिन जाने का इतना भय नहीं जितना दो बातों का मेरे हृदय को दुःख है। एक तो यह कि सब लोग इस बात को अच्छी तरह जानते हैं कि मैं अपनी प्रजा का कितना ध्यान रखता हूं और किस तरह अपनी सन्तान से भी अधिक प्यारा समझ कर उनका पालन-पोषण करता हूं, अफ़सोस कि इस अन्यायी और निर्दयी के कारण उन निर्दोषों को तलवार की भेट चढ़ाना पड़ेगा, दूसरे यह चिन्ता है कि यदि राजकुमारी चन्दनवाला का विवाह कहीं हो गया होता तो आज मुझे इस बात का भय न होता कि मेरी मृत्यु के वाद इस गरीब कन्या की क्या दुर्गति होगी?

रानी धारणी–महाराज! हिन्दू स्त्री का धर्म है कि वह अपने पति की आज्ञा का पालन करे वह अपने स्वामी को शिक्षा तथा उपदेश देने का अधिकार नहीं रखती फिर भी यह दासी हाथ जोड़ कर प्रार्थना करती है कि आप दोनों बातों की चिन्ता छोड़दें धर्म और शास्त्रों में लिखा हुआ है कि

जिस प्रकार राजा का कर्तव्य है कि वह अपनी प्रजा की देखभाल प्रेम, दया, स्वभाव से करे उसी प्रकार प्रजा का भी यह कर्तव्य है कि जिस देश और राजा पर कोई कष्ट आवे तो वह उस कष्ट के दूर कर देने में अपना जीवन गँवादे। अब रही हमारी पुत्री चन्दनवाला सो स्वामी जी मैं आप जैसे क्षत्री राजा की रानी और राजा चेटक जैसे राजा की पुत्री हूं, आप निश्चिन्त रहें जब तक मेरे शरीर में आत्मा और बाहों में बल मौजूद है उस वक्त तक किसी की इतनी शक्ति नहीं जो उसके हृदय को दुःख पहुंचा सके:-

भय नहीं इस बात का, राजा हो या धनवान हो।
भीम जैसा वीर रावण की तरह बलवान हो॥
जिसने इस को दुःख दिया, जग से मिटादूंगी उसे।
स्त्री कर सक्ती है क्या क्या, दिखादूंगी उसे॥

राजा दधिवाहन-हृदयेश्वरी! तुम्हारे इन वीरता के शब्दों से मेरा मन बहुत ही प्रसन्न हुआ वास्तव में सच्ची क्षत्राणियों को इसी प्रकार अपनी और दूसरों की रक्षा करनी चाहिये, अब मैं तुम्हारी और चन्दनवाला की तरफ से निर्भय होकर शत्रुओं से युद्ध करूंगा।

रानी धारणी-अच्छा तो अब चलकर विश्राम कीजिये।

राजा दधिवाहन-प्रिये! मुझे अभी मंत्रीजी से मंत्रणा करनी है मैंने उन्हें इसी समय बुलाया है इसलिये मैं उनके पास जा रहा हूं।

(राजा दधिवाहन रानी धारणी को छोड़कर जाता है)

रानी धारणी-हे प्रभू, दीनानाथ, विश्वोद्धारक, पतितपावन, हमारे धर्म और लाज की रक्षा कीजिये, हमें दुष्ट पापियों के फन्दे से बचाइये ।

गाना ।

यही तो है समय ऐ वीर स्वामी, जल्द आओ तुम ।
जगत को अत्याचार और पापों से बचाओ तुम ॥
हुए हैं तुम से पहले, तीर्थंकर और जितने भी ।
अकेले उन सभों का रूप, धारण करके आओ तुम ॥
दयालू हो दया करके, मिटाओ खोज हिंसा का ।
अहिंसा धर्म की संसार में, शोभा बढ़ाओ तुम ॥
बुराई के भँवर में फँस गई, जिन धर्म की नैया ।
इसे ऐ जग के खेवय्या, किनारे पर लगाओ तुम ॥
ये क्या अन्धेर है भाई का, भाई हैं यहां बैरी ।
मिटा कर वैर हृदय से, गले इन को मिलाओ तुम ॥
दुराचारी हों या पापी, बनें सब धर्म के सेवक ।
वह उत्तम और प्यारे शब्द, ऐ भगवन सुनाओ तुम ॥
यही है नाज़ की आशा, यही है कामना इसकी ।
दिखाकर ज्ञानलीला इसको, शिष्य अपना बनाओ तुम ॥

(जाना)
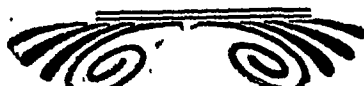
मनोरंजन

अङ्क १ दृश्य ८

[मूलचन्द नामी सेठ जिसकी उम्र साठ वर्ष की है और जो पैसे का बड़ा ही लोभी है अपनी पहली स्त्री के देहान्त हो जाने पर दूसरे विवाह की तरकीबें सोचता है। सेठ का मूर्ख नौकर गोपाला दो चार आसामियों के भागजाने लड़ने और रुपया न देने की खबर सुनाता है जिससे मूलचन्द को बड़ा ही दुःख होता है इतने में महाशय रतनलाल बगल में पोथी पत्रा लिये और मीन 'मेष' का राग अलापते हुए वहां आते हैं विवाह के बारे में तीनों पुरुषों की मजेदार बातचीत ।]

मूलचंद–पैसा पैसा, आहा पैसा भी कैसी प्यारी और उत्तम वस्तु है जिसका नाम सुनते ही क्या बालक, क्या बूढे सभों का मन ललचाने लगता है संसारी मनुष्य तो क्या बड़े २ महात्मा और संन्यासी भी इसके जाल में फंसकर अपना धर्म और ज्ञान सब कुछ भूल जाते हैं उनका सारा तप, जप मिट्टी में मिल जाता है लोग कहते हैं कि पैसा पाप और बुराई की जड़ है परन्तु मैं कहता हूं कि पैसा, हां, हां केवल पैसा ही सुख और सन्तोष की कुंजी है यह पैसा ही है जो बड़े से बड़े पापी को धर्मात्मा और महापुरुष बनाता और

उसकी समस्त बुरायों पर पर्दा डाल देता है। यह पैसे ही की शक्ति है जो धनवान के पाप को पुण्य के रूप में दिखाती है। तुम रात दिन जुआ खेलो, झूठ बोलो, व्यभिचार और इसी प्रकार के सारे बुरे काम करो परन्तु दुनिया दिखावे को धर्म और जाति के कामों में सौ दो सौ रुपये का दान दे दिया करो फिर देखो समाज तुम्हें क्या समझती, और तुम्हारा कितना आदर करती है। तुम्हारी वोही बुराइयां नेकियां बन जांयगी और तुम संसार में कर्ण और युधिष्ठिर के समान दानी और ज्ञानी माने जाओगे विश्वास न हो तो सेठ साहूकारों की दुकानों पर जाकर देखो, जहां बड़े २ ऊंचे कुल के पुरुष आते और "सेठजी नमस्कार" कह कर घण्टों बैठे हुए सेठ जी के मुंह की तरफ बन्दर की तरह ताकते रहते है पिता जी के मृत्यु के बाद जिस समय मेरे पास एक कौड़ी भी नहीं थी और मैं दहीवड़े बेचकर अपना पेट पालता था. उस वक्त कोई मुझे अपने पास खड़ा भी नहीं होने देता था। और या आज बड़े २ धनवान दूर ही से 'सेठ मूलचन्द जी' कह कर प्रमाण करते हैं। वाहरे पैसे तेरी लीला भी कैसी विचित्र है। परन्तु मूलचन्द जी जिस प्रकार रुपये पैसे के बारे में तुम्हारा भाग्य अच्छा है उसी प्रकार स्त्री के बारे में वह खोटा भी है, इसका कारण ? कारण यही कि इस बुढ़ापे में स्त्री के मर जाने से तुम्हें अपने हाथ से पूरियां सेकनी पड़ीं (कुछ सोच कर) चलो अच्छा ही हुआ चालीस वर्ष

से एक स्त्री के साथ जीवन बिताते बिताते जी भी घबरा गया था उस बूढ़ी स्त्री के मरजाने से अब किसी छोटी उम्र की सांवली सुन्दर और क्वारी कन्या के साथ विवाह करने की आशा तो हो गई।

गोपाला-(डण्डा घुमाता हुआ आता है) मार डालूंगा मार डालूंगा ! एक दो को नहीं सब को मारडालूंगा।

मूलचंद-हैं ! यह इसे क्या हो गया ? (गोपाला के कन्धे पर हाथ रख कर) अरे क्या हुआ किसको मारडालेगा ?

गोपाला-(पीछे की तरफ देखकर और उधर को मुंह करके) कौन ! सेठ जी, बस हट जाइये इस समय एकदम मेरे सामने से हट जाइये, यदि बलवान और शूरवीर गोपाला का डंडा पड़ गया तो हड्डियां चूर चूर हो जाएंगी और खोपड़ी फुटबाल को तरह इधर उधर लुढ़कती फिरेगी।

मूलचंद-किसके डंडा पड़ेगा और किस को हड्डियां चूर चूर हो जायँगी ?

गोपाला-जो सामने होगा।

मूलचंद-सामने तो मैं ही हूं।

गोपाला-तो बस तुम ही सही, (इतना कहकर डंडा संभालता है)

मूलचंद-(घबरा कर) परन्तु इसका कारण ?

गोपाला-कारण वारण तो मैं कुछ जानता नहीं केवल इतना

जानता हूं कि इस समय क्रोध के मारे मेरे हाथ चकरा रहे हैं इस लिये कहीं ऐसा न हो कि वह चकराते चकराते तुम पर बरस पड़ें।

मूलचंद- अबे उल्लू के पट्ठे! नौकर होकर मालिक पर डण्डा चलाएगा?

गोपाला—उल्लू का पट्ठा कौन?

मूलचंद—तू और कौन।

गोपाला-(कुछ देर सोच कर और गर्दन हिला कर) ऊं हूं! कभी नहीं हरगिज़ नहीं सेठ जी उल्लू के पट्ठे तुम हो मैं नहीं हूं।

मूलचन्द-क्या मैं?

गोपाला—हां तुम।

मूलचन्द-नहीं तू।

गोपाला—नहीं तुम, तुम, तुम, यदि तुम उल्लू के पट्ठे न होते तो मुझ जैसे ज्ञानी और बुद्धिमान नौकर से पूछे विना ज़रा से व्याज के लोभ में आकर अपना रुपया ऐसे दुष्ट और पापियों को कदापि न देते जो लेते समय तो भीगी विल्ली की तरह ग़रीब बन जाएं और देते समय पागल कुत्ते की तरह सूरत देखते ही काटने को दौड़ें।

मूलचन्द-परन्तु हुआ क्या? कुछ कहेगा भी या यूं ही बातें बनायेगा।

गोपाला—अच्छा तो क्या आज तड़के ही तड़के जो कुछ मुझ पर बीती है वह तुम्हें अवश्य ही सुना दूं ।

मूलचन्द—हां सुना ।

गोपाला—मगर सेठ जी पहले एक बात बता दो ।

मूलचन्द—क्या ?

गोपाला—वह बातें बड़ी ही कड़वी और कषैली है तुम उन्हें अपने पेट में पचा भी सकोगे या नहीं ?

(सेठ की तोंद पर हाथ फेरता है)

मूलचन्द—अरे यह क्या करता है ?

गोपाला—(हंसकर) कुछ नहीं ज़रा यह देखता हूं कि आज तुम ने कितना भोजन किया ।

मूलचन्द—मेरे भोजन से तुझे मतलब ?

गोपाला—मतलब यही कि यदि पूरियां कचौरियां ज्यादा नहीं ठूंसी हैं जब तो ये सारी बातें पच जाएंगी ।

मूलचंद—और नहीं तो ?

गोपाला—बस बेटा जी (भूला भूला) सेठ जी फौरन ही बद हज़मी हो जायगी इसलिये पहले से दो पैसे का चूर्ण मंगाकर रख लो मेरी बात सुनकर जैसे ही खट्टी डकार आय, तुरन्त चूर्ण की एक चुटकी चाट लेना, क्यों समझे बेटा जी (अरे फिर वही भूल हुई) क्षमा करो सेठ जी ।

मूलचंद–(बिगड़ कर) बस मैं जान गया आज तू कहीं गया वया नहीं, मेरे सामने झूट मूंट बातें बनाता है ।

गोपाला–सेठ जी तुम तो ज़रा २ सी बात में धोती से बाहर हो जाते हो यदि तुम्हें विश्वास नहीं तो तुम्हारी क्या, तुम्हारे पिता की, पिता के पिता की, सौगन्ध खाता हूं कि मैं गया था ।

मूलचंद–गया था तो ला कितने रुपैया लाया, व्याज ही लाया या कुछ मूल भी लाया, निकाल निकाल तुरन्त अण्टी में से निकाल ।

गोपाला—रुपैया की अच्छी कही मूल में तो मिली गालियां और व्याज में मिला थप्पड़ ।

(सेठ जी के गाल पर एक थप्पड़ रसीद करता है)

मूलचंद—(गाल को सहला कर) हाय ! हाय ! मार डाला अरे तेरा सत्यानास जाय यह कैसा पाजीपन ।

गोपाला—(हाथ जोड़ कर) क्षमा करो, सेठ जी क्षमा करो मैं ने जान बूझकर थप्पड़ नहीं मारा ?

मूलचंद—जान बूझ कर नहीं मारा, तो कैसे मारा ?

गोपाला—जिस तरह नाटक मण्डली के पुरुष नाटक करते समय जिसका स्वांग भरते हैं उसका वैसा ही स्वभाव दिख-लाते हैं उसी प्रकार मैं भी इस समय थप्पड़ मारने का स्वांग

दिखला रहा था सामने आप का गाल आ गया और वह थप्पड़ गाल पर जा लगा, भला आप ही न्याय कीजिये इसमें मेरा क्या अपराध है ?

मूलचंद —अपराध के बच्चे ! आसामियों ने क्या कहा बताता है तो बता नहीं तो निकल यहां से ।

गोपाला-अच्छा सुनिये हरीराम ने तो इङ्कार कर दिया कि मुझे कुछ देना ही नहीं ।

मूलचंद—क्या कहा देना ही नहीं ?

गोपाला—घबराइये नहीं गंगा प्रसाद ने कहा तुम्हारा सेठ बड़ा लोभी और बड़ा ही अधर्मी है दो के चार और चार के दस वसूल करता है ऐसे दुष्ट और पाजी को हैज़ा प्लेग भी तो नहीं होता ।

मूलचंद—उसने मुझे गालियां दीं और तू ने कुछ नहीं कहा ?

गोपाला—तुम गालियों को ही रो रहे हो उस मूला चमार ने तो छूटते ही इस ज़ोर से थप्पड़ रसीद किया कि मेरा मुंह फिर गया और साथ ही मेरे और तुम्हारे सारे कुल को वोह वोह गालियां सुनाई' कि मेरा पेट तो आज भोजन के विना ही इतना भर गया कि जीवन के अन्त तक भी खाने पीने की इच्छा न होगी ।

मूलचंद—राम, राम, एक चमार के हाथ से पिट गया यहां

आकर तो ऐसी डींगे मार रहा है और वहां अपने बाबा से कुछ नहीं कहा।

गोपाला—कुछ न कहा के भरोसे न रहियेगा मैंने भी इतने डण्डे जमाए कि वह मूर्छित होकर धरती पर गिर पड़ा नाक और मुंह से लहू की धारा बहने लगी, यदि पास पड़ोस के लोग आकर न रोकते तो मैंने आज बच्चा को मुर्दों की जूनियां गांठने के लिये उस लोक में भेज दिया होता।

मूलचंद—बाप रे बाप यह क्या किया ?

गोपाला—भय न करो, वह मरा नहीं फक़त दो चार पसलियां टूट गईं और दो चार महीने के लिए खटिया पर लेट गया।

मूलचंद—और जो उसने राज दर्बार में नालिश करदी तो ?

गोपाला—तो क्या हुआ साल दो साल के लिये चक्की पीसने जेलखाने चले जाना।

मूलचंद—मारा तू ने और चक्की पीसने जेलखाने मैं जाऊं ?

गोपाला—निश्चय ! क्योंकि मैं तो नौकर हूं जैसा कहोगे वैसा करूंगा। इसलिये तुम्हारो ही आज्ञा के अनुसार मैंने उसे पीटा है।

मूलचंद—गधे के बच्चे ! मैंने यह कब कहा था कि किसी की हड्डी पसली तोड़ देना मेरे कहने का तो यह मतलब था

कि यदि कोई रुपैया देने में झगड़ा करे तो ज़रा डांट डपट दिया या ज्यादा से ज्यादा दो चार घप्प लगा दिये ।

गोपाला—सेठ जी ऐसी मार बनिये मारते हैं, हम तो क्षत्री पुत्र हैं युद्ध के समय जब तक शरीर से रक्त धारा न बह जाये हमारा मन कदापि प्रसन्न हो ही नहीं सक्ता ।

म० रतनलाल—ठीक और बिलकुल ठीक यदि इतवार को 'हस्त' सोमवार का 'श्रवण' मङ्गल को 'अस्वनी' बुध को 'अनुराधा' बृहस्पति को 'पुष्य' शुक्र को 'रेवती' और शनिवार को 'रोहिणी' नक्षत्र हों, तो ऐसे दिन जो कार्य भी किया जाय वह ज़रूर ही सफल होता है आज कौनवार है (सोच कर) बुधवार और आज का नक्षत्र क्या है ? (उंगलियों पर गिनकर "रोहिणी, कृतिका, मूल, मृगसर, श्रवण, अश्विनी, अनुराधा" हां हां. अनुराधा है बड़ा ही मनोहर नक्षत्र और वैसे भी 'बुध शुद्ध' की कहावत मशहूर है । फिर क्या है आनन्द ही आनन्द है "भज कलदा-रम् भज कलदारम्" ।

मूलचंद—'महाशय रतनलाल जी नमस्कार' ।

म० रतनलाल—नमस्कार ! डमस्कार, समस्कार । कहिये सेठजी कुशल तो है ना ? आज आप ने मुझे किस कारण याद किया ?

गोपाला—(आगे बढ़कर) आज्ञा हो तो बताऊं ।

मूलचंद–(गोपाला से) इधर हट, तुझसे कौन पूछता है ?

गोपाला–तो क्या बिना पूछे कुछ बोलना कोई अपराध या पाप है ?

मूलचंद–महाशय जी ! यह तो आप को मालूम ही है कि मेरी पत्नी का देहान्त हो चुका है।

म० रतनलाल–"भज कलदारम्" सेठ जी, क्या कहूं मुझे कितना शोक हुआ है 'हा' "भज कलदारम् भज कलदारम् ।"

गोपाला–(दर्शकों की तरफ़) बाप रे, महाशय होकर झूट बोलता है यह नहीं कहता कि यहां तो रात दिन यही प्रार्थना करते हैं कि जल्दी किसी की स्त्री मरे और वोह दूसरा विवाह रचाए ताकि खाने को हलुआ पूरी मिले और साथ ही कुछ दान दक्षिणा भी यारों के हाथ लगे ।

मूलचंद–आप जानते हैं कि मेरे कोई बेटा पोता नहीं जो उसकी बहू घर को देख-भाल कर सके और यह मानी हुई बात है कि घर का काम काज स्त्री के बिना नहीं चल सक्ता ।

म० रतनलाल–हां सेठजी नियम तो ऐसा ही है लाख धन दौलत हो परन्तु स्त्री के बिना पुरुष को कभी जीवन का सच्चा सुख प्राप्त नहीं हो सक्ता, सत्य तो यह है कि जिस घर में स्त्री नहीं वोह नर्क के समान है ।

मूलचंद–महाशय जी जब से मेरी स्त्री मरी है खाने पीने का मज़ा ही जाता रहा ।

रतनलाल–चिन्ता न कीजिये, यदि आप की इच्छा हो तो फिर सब कुछ हो सक्ता है । "भज कलदारम् भज कलदारम् ।"

गोपाला–(एक तरफ़ होकर) वोह मारा ! 'और चारों खाने चित मारा' क्यों कैसी कही आगये न महाशय मतलब की बात पर. [आगे बढ़कर] क्यों महाशय जी अब क्या हो सक्ता है क्या हमारी सेठानी जी ज़िन्दा हो जायंगी अगर आप अपने "भज कलदारम्" मंत्र की शक्ति से ऐसा कर सकें. तो मैं साढ़े उन्नीस आने का मोहन भोग अवश्य ही आप की भेंट चढ़ाने को तय्यार हूं कहिये क्या विचार है ?

म० रतनलाल–[हँसकर] अरे मूर्ख कहीं मरा हुआ जीव भी ज़िन्दा हो सक्ता है ?

गोपाला–यह मैं क्या जानूं आप ही तो अभी कह रहे थे कि फिर सब कुछ हो सक्ता है ।

म० रतनलाल–इसका अर्थ यह था कि दूसरा विवाह हो सक्ता है ।

गोपाला–दूसरा विवाह ! (हंसते हंसते ज़मीन पर लोट जाता है) दूसरा विवाह, सेठ का, और इस उम्र में ? वाह रे मेरे "भज कलदारम्' !

म० रतनलाल–क्यों इसमें आश्चर्य की क्या बात है ?

मूलचंद–(गोपाला से) चल इधर हट यदि अबकी बोला तो कान पकड़ कर यहां से निकाल दूंगा । (रतनलाल से) महाशय जी आप भी किस गधे से बात करते हैं यह तो दिन

भर इसो प्रकार मेरा भेजा खाता रहता है आप मुझसे बात कीजिये, अभी आपने कहा था कि दूसरा विवाह हो सक्ता है, इसी के लिये तो मैंने आपको बुलाया है।

म० रतनलाल–मैं आपके हर काम के लिये तय्यार हूं।

गोपाला–आप से बढ़कर सेठजीका और कौन मित्र हो सक्ता है?

मूलचंद–तो क्या आप की राय में मुझे दूसरा विवाह करना चाहिये?

म० रतनलाल–मेरा तो यही कहना है कि जबतक आप दूसरा विवाह न करेंगे बुढ़ापा आराम से नहीं कट सक्ता। "भज कलदारम् भज कलदारम्।"

मूलचंद–यह तो ठीक है परन्तु..............!

म० रतनलाल–परन्तु क्या?

मूलचंद–यही कि समाज क्या कहेगी?

म० रतनलाल–इसमें समाज क्या कह सकती है? क्या दूसरा विवाह करना कोई पाप है?

मूलचंद–पाप तो नहीं है मगर लोग यह न कहेंगे कि इस बुढ़ापे में दूसरा विवाह करने चले हैं।

म० रतनलाल–बुढ़ापा कैसा, वाह सेठ जी आपने भी अच्छी कही क्या आपने यह कहावत नहीं सुनी "साठा सो पाठा" लोग तो सत्तर सत्तर अस्सी २ वर्ष की उम्र में विवाह करते हैं,

आप तो अभी साठ ही वर्ष के हुए हैं अभी से बुढ़ापा कैसा ?
"भज कलदारम् भज कलदारम् ।"

गोपाला–बूढ़े हों सेठ जी के वैरी, महाशय जी अब भी हमारे सेठ जी आजकल के युवकों से ज़्यादा दम रखते हैं।

मूलचंद–क्यों बे उल्लू तू फिर बीच में बोला।

गोपाला–भूल हो गई अच्छा इस बार और क्षमा कर दो, फिर नहीं बोलूंगा।

म० रतनलाल–सेठजी उम्र और समाज की तो आप चिन्ता न करें आप विवाह के सामान और रुपये का बन्दोबस्त करलें स्त्री का मामला मुझ पर छोड़दें देखियेगा ऐसी मोहनी मूरत के साथ आपका विवाह किया हो, कि देखते ही मन लोट पोट हो जाय किन्तु ज़रा रुपये का ख़र्चा है "भज कल-दारम् भज कलदारम्"

मूलचंद–कितने रुपये ख़र्च होंगे ?

म० रतनलाल–यदिआप किसी विधवा के साथ विवाह करना चाहते हैं तो दो तीन, और यदि किसी क्वांरी कमसिन कन्याके साथ जीवन बिताने की इच्छा हैं तो कम से कम दस हज़ार रुपैया लगेंगे।

मूलचंद–(घबरा कर) दस हज़ार !

म० रतनलाल–और क्या ? इस उम्रमें किसी क्वांरी कन्या के साथ विवाह करना आसान नहीं, क्या लड़की के माता

पिता पांच छः हज़ार से कम लेंगे ? फिर गहना कपड़ा सभी कुछ चाहिये।

मूलचंद-महाशय जी इससे कम कीजिये यह तो भारी रक़म है।

म० रतनलाल-सेठजी आप दस हज़ार रूपयों को ज़्यादा समझते हैं जो ऐसी बात करते हैं आपको कुछ वसन्त की भी ख़बर है इस ज़माने में कन्याओं का नीलाम होता है, नीलाम !

मूलचंद-कैसा नीलाम ?

म० रतनलाल-यही कि ज़ात पात और उम्र को कोई नहीं देखता यहां तो यह कहावत हो रही है कि जो सबसे ज़्यादा बोली लगाएगा वोही पायेगा। आज कल विवाह नहीं होते हैं कन्यायें दौलत और धन की वेदी पर भेंट चढ़ाई जाती हैं। "भज कलदारम् भज कलदारम्"

मूलचंद-महाशय जी फिर भी दस हज़ार रुपैया बहुत हैं यदि आप से हो सके तो आठ हज़ार में यह काम कर डालिये।

म० रतनलाम-अगर आपको मेरा पूरा पूरा विश्वास है और साथ ही यह शुभ कार्य करना चाहते हैं तो आठ दस हज़ारकी चिन्ता न कीजिये। मैं आपको एक कौड़ी भी बेकार ख़र्च न होने दूंगा। "भज कलदारम् भज कलदारम्।"

मूलचंद—भला महाशय रतनलालजी आप यह कैसी बातें करते हैं इस संसार में आपके सिवा मैं किसी को अपना सच्चा मित्र नहीं समझता, आप पर विश्वास न होगा तो फिर क्य

स्वर्ग से देवता आएंगे ? जो आपकी इच्छा हो वोह कीजिये, परन्तु जहां तक हो सके ज़रा जल्दी कीजियेगा और सब बातों की अच्छी तरह परीक्षा कर लेना ऐसा न हो पीछे कोई बात निकले जिससे किसी प्रकारका झगड़ा फ़िसाद पैदा हो।

म० रतनलाल--आप चिन्ता न करें मैं नादान और मूर्ख नहीं जो धोका खा जाऊं आप जैसे मित्रों की कृपा से एक दो नहीं सैकड़ों हज़ारों विवाह इन्हीं हाथों से करा दिये और आज तक किसी ने दोष नहीं लगाया। "भज कलदारम् भज कलदारम्।"

मूलचंद--क्यों नहीं वैसे तो आप स्वयं बड़े बुद्धिमान और ज्ञानी हैं।

गोपाला--(सेठ जी से) सेठ जी मैं हाथ जोड़कर प्रार्थना करता हूं कि इस समय तो ज़रूर मुझे दो चार शब्द मुंह से निकालने की आज्ञा दीजिये नहीं तो मेरा पेट फट जायगा।

मूलचंद--क्यों वे फिर तूने शरारत की।

गोपाला--सेठ जी, शरारत नहीं मैं आपके लाभ की बात कहना चाहता हूं।

मूलचंद--अच्छा जल्दी बोल।

गोपाला--मैं यह कहता हूं कि यदि आपको विवाह ही करना है तो कांरी और कमसिन कन्या के बदले किसी ऐसी स्त्री

से विवाह कीजिये, जो दो चार बच्चों की माता और दस बीस बालकों की नानी दादी हो।

मूलचंद–कारण ?

गोपाला–कारण यही कि अब आपकी उम्र साठ वर्ष को हो गई न जाने कब यमराज से युद्ध की ठहर जाये और इस युद्ध का जो परिणाम होता है वह सब को मालूम है इस लिये केवल अपने स्वार्थ के कारण एक निर्दोष कन्या का समस्त जीवन नष्ट करने से क्या लाभ होगा, दूसरे अगर यह स्त्री भी पहली स्त्री की तरह कुड़क निकली तो फिर आप दोनों तड़के तड़के "कुकड़ूँ कूँ" किया करना और यदि कहीं बिल्ली के भागों छींका टूटा भी और किसी बालकने भूलें से इस घर में जन्म ले लिया तो अब नाना दादा बनने के लिये और पन्द्रह बीस वर्ष इन्तज़ार कीजिये, इस कारण मैं तो यही राय दूंगा कि आप इस कहावत पर चलें "बोया न जोता ईश्वर ने दिया पोता।"

मूलचन्द–बड़ा ही पाजी है, निकल कम्बख्त यहां से।

(सेठ मूलचन्द, महाशय रतनलाल और गोपाला का गाना)

मूलचन्द–मुझे अच्छी सी इक जोरू दिलादो।

गोपाला–बुढ़ापे में इसे दूल्हा बनादो।

मूलचन्द–मेरे मन की लगी को अब बुझादो।

गोपाला–इसे जल्दी से मरघट में सुलादो।

मूलचन्द-कोई सुन्दर सलोनी और कमसिन स्त्री पाऊं ।
तो उसके प्रेम की बातों से अपने मन को बहलाऊं ॥

गोपाला-पिता से भी बड़ा जब पाये तो फिर क्या तुम्हें समझे ।
मज़ा जब है वह भोली कन्या दादा तुम्हें समझे ॥

मूलचन्द-मुझे अच्छी सी इक जोरू दिलादो ।

गोपाला-बुढ़ापे में इसे दूल्हा............ !

(जाना)

अङ्क १   दृश्य ६

राजा दधिवाहन के गढ़ का बाहरी दृश्य

राजा शतानीक की राजा दधिवाहन पर चढ़ाई ज़बरदस्त युद्ध और उसका भयानक परिणाम।

राजा दधिवाहन—मेरे वीर जवानो ! वफ़ादार सेवको ! और अपनी वीरता से संसार में इस देश और राज्य का मान बढ़ाने वाले मित्रो ! तुम्हें अच्छी तरह मालूम है कि लोभी और अभिमानी राजा शतानीक ने विना अपराध केवल ज़रासे सरहदी झगड़े के कारण हम पर चढ़ाई की है इस निर्दयी को अपनी सेना की ज़्यादती और अपने हाथ पांव के बल पर इतना घमण्ड है कि वह तुम्हारे प्यारे देश के उजाड़ने राज महलों की ईंट से ईंट बजाने हज़ारों निर्वल अबला स्त्रियों को विधवा करने निर्दोष बालकों और अनाथ वृद्धों को पेट के कारण भीक मँगवाने पर तय्यार है।

किया इस देश को वरबाद, आपस की लड़ाई ने।
दिलों में वैर पैदा कर दिया, अपनी पराई ने॥
भलाई पर विजय पाए, यह ठानी है बुराई ने।
कमर बांधी है बेदादोसितम, पर अन्यायी ने॥
न लाज आंखों में निर्लज्ज के, न पापी के दया मन में।
मनुष्य की है कि है यह, राक्षस की आत्मा तन में॥

मन्त्री–महाराज इस युद्ध का क्या परिणाम निकलेगा, यह तो मैं कुछ कह नहीं सका केवल इतना ज़रूर कहूंगा कि हम कमज़ोर और निर्बल सही, संख्या में भी उनसे कम सही, सब कुछ सही परन्तु हमारी रगों में उन क्षत्रियों का रक्त लहरें मार रहा है जिनके भय से आज तक भारत की धरती कांपती है इस कारण सन्तोष रखिये आपके सेवक इस मैदान में वह तलवार के हाथ दिखायेंगे कि शत्रुओं को दांतों पसीना आजायेगा और एक दफा यह संसार महाभारत के युद्ध को भी भूलजायेगा। आज इस धरती पर लहू की नदियां बह जायँगी और जब तक शरीर में रक्त की एक बूंद भी बाक़ी रहेगी उस समय तक न तो मैदान से हमारे पांव पीछे हटेंगे और न हम शत्रुओं को एक क़दम आगे बढ़ने देंगे।

क़ज़ा भी जान के भय से, न सन्मुख होके आएगी।
बजेगा आज वह खांडा, कि धरती कांप जाएगी॥
इधर तलवार की वर्षा, उधर बौछार तोरों की।
लहू बनकर बहेगी वीरता, बलवान वीरों की॥

राजा दधिवाहन–निश्चय तुम ऐसे ही हो और मुझे भी तुम से ऐसी ही आशा हैं परन्तु यह तो बताओ क्या मैंने इसी कारण तुम्हें पाल पोष कर इतना बड़ा किया है कि एक निर्दयी और लोभी मनुष्य की तलवार पर भेंट चढ़ादूं। क्या जिन हाथों से रातों को थपक थपक कर सुलाया करता था उन्हीं हाथों से तुम सब को यमदूत के हवाले करदूं?

दिल का सुख आंखों की ठंडक, हाय खो सक्ता नहीं ।
अपने हाथों अपना सीना, चाक हो सक्ता नहीं ॥
गोद मे पाला जिन्हें, भट्टी में उनको झोंकदूं ।
बाप हो कर पुत्र की, छाती में खञ्जर भौंकदूं ?

मन्त्री–देश और जाति की लाज यदि जीवन और राजपाट से अधिक प्यारी है तो सब कुछ करना पड़ेगा। अन्नदाता! ईश्वर की दया और कृपा से हमने उस जाति में जन्म लिया है जो क्षत्री कहलाती है जिसके कारण आज संसार में भारत का गौरव बना हुआ है। जो धर्म, आन और लाज पर जीवन गँवाने को बालकों का सुन्दर खेल जानती है।

ज़िन्दगी हरते हैं किन्तु, वीरता हरते नहीं ।
धर्म पर मरते हैं जो, ज़िन्दा हैं वह मरते नहीं ॥
कितने हो निर्बल हों, बलवानों से भय करते नहीं ।
आन प्यारी है जिन्हें, वह मौत से डरते नहीं ॥
ख़ून की धारा बहे तन से इसी में नाम है ।
बर्छियां सीने पै खाना क्षत्रियों का काम है ॥

(राजा शतानीक का अपनी सेना के साथ प्रवेश)

राजा शतानीक–यही है, वह धर्मी और ज्ञानी राजा दधिवाहन जिस की प्रजा ने मेरे राज की हद पर एक ऊधम मचा रक्खा है और जो इस झगड़े का उपाय करने और अपराधियों को सज़ा देने के बदले उल्टा मुझी को झूटा अन्याई और निर्दयी ठहराता है।

राजा दधिवाहन–हां ! हां ! मैंने जो कुछ कहा सत्य कहा सरहद के झगड़े का तो केवल एक बहाना है जिसकी आड़ में तू इस राज्य पर अपना अधिकार करना चाहता है ।

राजा शतानीक–यूं है तो यूं ही सही, मुझे भी राजा शतानीक न कहना यदि आज इस क़िले की ईंट से ईंट न बजा दूं तुझे और तेरे पक्षिपातियों को मौत के घाट न उतार दूं –

लबों पै ख़ौफ से वीरों की जान आती है ।
मेरे क्रोध से धरती भी कांप जाती है ॥
अनी से बर्छी की पत्थर को तोड़ देता हूं ।
मैं अच्छों अच्छोंके मुंह दममें मोड़ देताहूं ॥

राजा दधिवाहन–रहने दे, रहने दे, ओ घमण्डी और अभिमानी पुरुष ! यह शेख़ी रहने दे ऐसे कठोर शब्द मुंह से न निकाल । तेरी वीरता को केवल मैं ही नहीं सारा भारत जानता है अरे मूर्ख जो गरज़ते हैं वह बरसते नहीं यह कहावत ठीक है कि जब तक ऊंट पहाड़ के नीचे नहीं आता उसे अपनी उंचाई का हाल मालूम नहीं होता तेरी इन डींगों से तो साफ़ साफ़ यही प्रगट होता है कि तू ने अभी तक किसी सूरमा को देखा है और न किसी वीर से युद्ध करने का अवसर मिला है ।

प्रास कहते है किसे तीर किसे कहते हैं ।
जानता ही नहीं तू वीर किसे कहते हैं ॥

मोम करदेती है पत्थर को भी तलवार की आंच ।
तू ने देखी ही नहीं तेग़े शररवार की आंच ॥

राजा शतानीक—क्या कहा तलवार की आंच ?

राजा दधिवाहन—हां हां तलवार की आंच !

राजा शतानीक—मैं तलवार को बांस की खपची समझता हूं ।

राजा दधिवाहन—वह किसी कायर की तलवार होगी, आज ज़रा क्षत्रियों की तलवार भी देख—

राजा शतानीक—यह तलवार !

राजा दधिवाहन—हां यह तलवार ।

राजा शतानीक—(ताने से) इस तलवार पर तो दया और धर्म की काई जमी हुई है—

हो न जब कस बल भुजाओं में तो युद्ध बेकार है ।
काट कर सक्ती नहीं यह काठ की तलवार है ॥
राम की सुमरन फिरा उनकी तरह बनवास ले ।
राज गद्दी छोड़ दे जंगल में जा सन्यास ले ॥

राजा दधिवाहन—अरे ! बुद्धि हीन ! आंखों के अन्धे जिसे तू दया और धर्म की काई समझ रहा है वास्तव में वही सूरमाओं और वीरों की तलवार का असली जौहर है सच्ची बहादुरी उसी को कहते हैं जिससे अनाथों और निर्दोषों की सहायता धर्म और दया की रक्षा की जाय—निर्बल और

निरापराधी मनुष्यों के गला काटने का नाम बहादुरी नहीं बुज़दिली हैं। यदि ऐसा न होता तो आज के दिन वह हज़ारों मनुष्य जो धन दौलत नाम ग्राम के लोभ से अपने निर्दोष भाइयों के गले काट डालते हैं, डाकू चोर और लुटेरे कहलाने के बदले वीर और सूरमा कहलाये जाते, धिक्कार और फिटकार के बदले चारों ओर से उनकी वाह वाह होती समाज घृणा करने और सूली पर लटकवाने के बदले उन्हें प्रेम से अपने पास बिठाती और उनकी वीरता के गीत गाती—

वीर वह है जिसके हृदय में दया हो धर्म हो।
पापियों से सख्त निर्दोषों के हक़ में नर्म हो॥
कष्ट हो, दुःख हो, न वह लेकिन भलाई से फिरे।
ज़ख्म खाकर भी न मुंह उसका लड़ाईसे फिरे॥

राजा शतानीक—'समाज' समाज' तुझे यह भी मालूम है कि समाज है क्या ?

राजा दधिवाहन—क्या है ?

राजा शतानीक—स्वार्थी और कायर पुरुषों की एक मण्डली है जो दया और धर्म के झूटे उपदेश सुना सुना कर दूसरे मनुष्यों को भी अपना ही सा कायर और स्वार्थी बनाती है। जिस प्रकार शेर की दहाड़ सुनकर डरपोक मनुष्य का शरीर मृत्यु के भय से कांपने लगता है उसी प्रकार ख़ून ख़राबी और युद्ध की चर्चा सुनकर इन बुज़दिलों के प्राण छूट जाते हैं हृदय थरथरा उठता है।

राजा दधिवाहन—यह तेरी भूल है जो समाज को अपराधी ठहरा रहा है अरे मूर्ख समाज और धर्म यही दो वस्तुएं ऐसी हैं जिनके बनाये हुए नियमों पर चलने से लोक और परलोक दोनों जगह मनुष्य का उद्धार होता है क्या भरी सभा में सती द्रोपदी की साड़ी खिंचवाने से अधिक और भी कोई घोर पाप हो सकता है ? नहीं। फिर उस समय भीष्म पितामह जैसे ब्रह्मचर्य का पालन करनेवाले शूरवीर के कुछ न बोलने और एक निर्दोष अबला सतीकी सहायता न करनेसे कोई उन्हें कायर कह सक्ताहै ? हरगिज़ नहीं। सारा जगत् जानता है कि ये वही भीष्मपितामह थे जिनके बाणों ने युद्ध के समय पाण्डवों और उनकी सेना के छक्के छुड़ा दिये थे। ऐसे कठिन समय पर ऐसे बलवान मनुष्य के चुप रहने का कारण ? यही कि धर्म और समाज के बनाये हुए नियमों के अनुसार वह उस राज की सेवा और उसकी सहायता का वचन हार चुके थे और इसी हेतु वोह इस राज के मालिक कपटी और घमण्डी दुर्योधन के विरुद्ध एक शब्द भी मुंह से नहीं निकाल सकते थे।

राजा शतानीक—मैं यहां तेरा उपदेश सुनने नहीं आया।

आ इधर आ, हाथ में तलवार ले खांडा सम्हाल।
राजपूती शान दिखला हौसला मनका निकाल॥
क्षत्री का पुत्र है तो वीरता अपनी दिखा।
धर्म का पालन किया है धर्म की शक्ति दिखा॥

(राजा शतानीक और दधिवाहन दोनों तलवारों से लड़ते हैं राजा शतानीक थककर पीछे हटता जाता है। बराबर में से एक तीर आकर राजा दधिवाहन की पसलीमें घुस जाता है, राजा दधिवाहन जैसे ही उधर देखता है बुज़दिल शतानीक फ़ौरन अपनी तलवार राजा दधिवाहन की दूसरी पसली में भौंक देता है, निर्दोष राजा ज़ख़्म खाकर धरती पर गिर पड़ता है।)

राजा दधिवाहन—धिक्कार है इस वीरता पर कि फटकार है ऐसे क्षत्री पुत्र होनेपर! निर्लज्ज कायर, जब तूने देखा कि तलवार की लड़ाई में विजय न पा सकूंगा तो दूसरे पुरुष को इशारा कर दिया कि वह छिपकर बाण चलाए।

राजा शतानीक-युद्ध के समय ऐसी बातों को कौन देखता है मतलब तो विजय पाने से है मनुष्य को चाहिये कि जैसे हो और जिस तरह हो अपने शत्रुओं को नुक़सान पहुंचाये।

[इतना सुनने के बाद राजा दधिवाहन का दम निकल जाता है, अपने राजा की मृत्यु देखकर उसकी सारी सेना गढ़ के सामने लड़कर मर जाती है, राजा शतानीक गढ़ के अन्दर प्रवेश करता है, दूसरे दरवाज़ेसे राजा शतानीक का लम्पट और कामी सेनापति राजा दधिवाहनकी स्त्री रानी धारणी और उसकी प्यारी पुत्री चन्दनवाला को धोका देकर गढ़ से बाहर निकाल लाता है।]

रानी धारणी—बताओ बताओ कहां हैं ? मेरे स्वामी और पति-देव का शरीर कहां है ?

सेनापति–यह है।

(रानी मूर्छित होकर गिर जाती है)

चन्दनबाला–(राजा के शरीर पर गिरकर) हाय ! मेरे पिता तुम कहां चले गये। हा ! मेरे स्वप्नों का अन्त में वही परिणाम निकला जिसका मुझे भय था, मेरी प्यारी सखियो ! तुम इस समय कहां हो आओ और अपनी राजकुमारी की दशा और अपने राजा की मृत्यु को अपने नेत्रों से देखो। दोनों में से एक भी मेरी बात का उत्तर नहीं देती, अच्छा, अच्छा मैं समझ गयी मालूम होता है कि दुष्टों ने या तो तुम्हें भी मार डाला है या क़ैद कर दिया है। माता ! प्यारी माता ! उठो क्या तुम भी अपनी प्यारी पुत्री से पिता जी की तरह ख़फ़ा हो गई हो।

रानी धारणी—(होश में आकर) मैं कहां हूं ? (सेनापति से) तुम कौन हो ?

सेनापति—मैं राजा दधिवाहन की फ़ौज का एक अफ़सर और आपका सेवक।

रानी धारणी—तुम क्या कहना चाहते हो कहो और जल्दी कहो।

सेनापति—महाराज की मृत्यु के बाद मुझे ज़िन्दा देखकर

आपको अवश्य आश्चर्य हुआ होगा कि सेना का अफ़सर युद्ध का मैदान छोड़कर महलों में किस कारण गया ? परन्तु जिस तरह एक वफ़ादार चाकर को अपने मालिक के जीवन की रक्षा करना लाज़मी है उसी तरह यह भी उसका कर्त्तव्य है कि वोह अपने मालिक के धर्म और लाजकी भी रक्षा करे।

रानी धारणी–इसका अर्थ ?

सेनापति—अर्थ यही है कि मैं अपने स्वर्गवासी महाराज की आज्ञा के अनुसार पहले आप को और राज कुमारी चन्दनबाला को इन पापियों से बचाकर आप के पिता राजा चेटिक के पास पहुंचा दूं इसके बाद शत्रुओं से एक निर्दोष राजा के खून का बदला लेने का कोई यत्न करूं।

रानी धारणी–मुझे भी अपने साथ रहने दो मैं इस शुभ कार्य में तुम्हारी सहायता करूंगी।

अन्दर से (खबरदार गढ़ी का एक आदमी भी बचकर न भागने पाए)

सेनापति–राजेश्वरी ! चलिये चलिये जल्दी यहां से चलिये यदि शत्रु गढ़ के बाहर आ गया तो फिर हमारा ज़िन्दा बचकर निकल जाना दुश्वार हो जायेगा इस कारण यह रोना धोना बन्द कीजिये और राज कुमारी को साथ लेकर इस सामने वाले जंगल की तरफ़ चल दीजिये।

रानी धारणी–तुम ठीक कहते हो मुझे और तुम्हें ज़रूर कुछ

दिनों और जीना चाहिये । चल प्यारी चन्दनबाला चल ।

सेनापति इस तरह की छल और कपट की बातें करके रानी धारणी और राज कुमारी चन्दनबाला को वहां से हटा कर जङ्गल की तरफ़ ले जाता है राजा शतानीक के सिपाही गढ़ के ऊंचे बुर्ज पर अपने राजा का झण्डा गाढ़ देते हैं !

(पटाक्षेप)

(प्रथम अङ्क समाप्त

अङ्क २ दृश्य १

जंगल ।

राजा शतानीक का सेनापति, राजा दधिवाहन की स्त्री रानी
धारणी और उसकी पुत्री राजकुमारी चन्दनबाला
को युद्ध के समय धोका देकर राजमहल से
जंगल में लाता, और रानी धारणी से
अपने प्रेम का इज़हार करता है।

गाना ।

रानी धारणी और चंदनबाला—

कहां तक कष्ट भोगें और कब तक दुःख उठाएं हम ।
कुछ इसका अन्त भी, कब तक सहे जाएं जफ़ाएं हम ॥
हरइक ने हम को छोड़ा, फेरलीं संसार ने आंखें ।
कहानी दुःख भरी, अब कौन है जिसको सुनाएं हम ॥
जो रक्षक अपने थे, इस लोक में परलोक वह पहुंचे ।
ये जीवन दुःखभरा, अफ़सोस अब कैसे बिताएं हम ॥
लहू की बूंद है तन में, न आंसू आंख में बाक़ी ।
लगी है आग जो, मन में उसे क्योंकर बुझाएं हम ॥
करे क्योंकर कोई, ऐ "नाज़" चारा अपने ज़ख्मों का ।
हज़ारों दाग़ हैं, सीने में किस किसको दिखाएं हम ॥

(सेनापति का प्रवेश)

सेनापति–रानी धारणी ! यह कौनसा स्थान है ?

रानी–यह एक उजाड़ और ख़ौफ़नाक जंगल है।

सेनापति–मुझे पहचानती हो कि मैं कौन हूं ?

रानी–पहचानती तो नहीं केवल इतना समझती हूं कि तुम मेरे स्वामी के वफ़ादार नौकर हो।

सेनापति–और यह भी जानती हो कि तुम्हें यहां किस कारण लाया हूं ?

रानी–क्यों नहीं, यह तो प्रगट ही है कि दुष्ट शत्रुओं के हाथ से अपने राजा अपने स्वामी की स्त्री और उसकी पुत्री को लाज और जीवन की रक्षा करने के लिये, और यही बात तुमने राजमहल में कही थी।

सेनापति–हां कहा तो ऐसा ही था, परन्तु तुम्हें धोका देने और यहां तक लाने के लिए।

रानी–धोका ! कैसा धोका !! तुम क्या कह रहे हो ? मैं ज़रा नहीं समझी।

सेनापति–घबराओ नहीं, धीरे धीरे सबकुछ समझ जाओगी

रानी–तो क्या तुम वह नहीं हो जो में समझ रही हूं ?

सेनापति–नहीं।

रानी–क्या तुम मेरे स्वामी के सेवक नहीं हो ?

सेनापति–नहीं ?

रानी–क्या तुम मेरे और मेरी पुत्री के धर्म्म, लाज और जीवन के रक्षक नहीं हो ?

सेनापति–नहीं नहीं ।

रानी–(घबराकर) फिर कौन हो ?

सेनापति–राजा शतानीक का सेनापति और राजा दधिवाहन का शत्रु ।

रानी–ओह ! परमात्मा कैसा अन्धेर ?

सेनापति–रानी धारणी डरो नहीं, मैं राजा शतानीक का सेनापति और तुम्हारे स्वामी का शत्रु अवश्य हूं, किन्तु जीवन के अन्तिम स्वांस तक तुम्हारी रक्षा और सहायता करने को तय्यार हूं ।

रानी–आग जलने की बदले ठण्डक पहुंचा सकती है ? सर्प विष को छोड़कर अमृत की बूंद दे सकता है ? तलवार काटने के बदले जख्मों को भर सकती हैं ? शत्रु बुराई छोड़ कर भलाई कर सकता है ?

सेनापति–हां सब कुछ हो सकता है । परन्तु अकड़ने घृणा करने से नहीं ।

रानी–फिर किस तरह ?

सेनापति–केवल मीठे २ शब्दों और प्रेम व्यवहार से ।

कब हो वह सख्ती से नर्मीसे जो बन जाता है काम ।
आदमी तो क्या पशू भी इस से हो जाते हैं राम ॥
झुक गई ख़ुद ही जो गर्दन बच गई तलवार से ।
शत्रु भी छोड़ देता है बुराई प्यार से ॥

रानी–अर्थात्

सेनापति–अर्थात् यही कि हर मनुष्य के सीने में दिल और दिल में प्रेम करने की शक्ति होती है। हृदेश्वरी! मैं आज से नहीं १५ वर्ष से, ध्यान से सुन रही हो ना ? पूरे १५ वर्ष से तुम्हारे अनुपम रूप लावण्य की प्रसंशा सुनकर रात दिन विरह की अग्नि में जल रहा हूं, यह राजा शतानीक और राजा दधिवाहन का युद्ध नहीं, बल्कि मेरा सौभाग्य था जिसके कारण यह दिन हाथ आया ।

ज़ालिम न बन निगाहे मुहब्बत से देख ले ।
मोहताज हूं गरीब हूं उलफ़त से देख ले ॥
अहसान कर दया से मुरव्वत से देख ले ।
सौगन्द अपने हुस्न की चाहत से देख ले ॥
हो जायगी हरी अभी खेती जली हुई ॥
सीने पै हाथ रख के बुझा दे लगी हुई ॥

रानी–अरे ओ लम्पट ! पापी नीच मनुष्य यह तू कैसी बातें कर रहा है ? एक असहाय अबला स्त्री जो कि अपने पति की

मृत्यु, राज पाट के लुट जाने और घर बार के उजड़ जाने से पहिले ही अधिक दुःखी हो रही है उस से ऐसी नीच बातें करते हुए लज्जा नहीं आती ?

सेनापति–लज्जा ! कैसी लज्जा !! क्या किसी पुरुष का एक सुन्दर स्त्री से प्रेम करना बुरी बात है ?

रानी–अवश्य है ! जो मनुष्य कामांध होकर अथवा लोभ के वशीभूत होकर अपने पवित्र धर्म को त्याग देता है वह मनुष्य पशु से भी नीच है। जो मनुष्य अपने घर की स्त्री छोड़कर पराई नारी पर मन ललचाता है, वह उस कुत्ते के समान है जो स्वादिष्ट पवित्र भोजनों की थाली छोड़कर झूठी पातल चाटता फिरता है।

कब छुपाये से छुपी है कीच आखिर कीच है।
जो मनुष्य कामी है वह कुत्ते से बढ़कर नीच है॥
जो समझता है मज़ा पाप और अत्याचार में।
जूतियां खाता है ऐसा आदमी संसार में॥

सेनापति–सुन्दरी ! इन फूल की पखडियों जैसे कोमल होठों से ऐसे कठोर शब्द अच्छे नहीं मालूम होते। क्या तुम्हें नहीं मालूम कि स्त्री का जीवन किस लिये बनाया गया है ?

रानी–किस लिये बनाया गया है ?

सेनापति–इसलिये बनाया गया है कि वह पुरुष के साथ जीवन के अन्तिम समय तक दुनिया का सुख भोगे। और जब वह

दुःखी हो तो अपनी मीठी २ बातों से उसका मन बहलाए।

रानी–ठीक है। किन्तु किस के साथ सुख भोगे और किस का मन बहलाए यह भी मालूम है ?

सेनापति–किस के साथ ? यह भी अच्छी कही ! पुरुष के साथ और किस के साथ।

रानी–किस पुरुष के साथ अपने या पराये ?

सेनापति–अपना हो या पराया प्रयोजन तो सुख भोगने से है।

रानी–यह वेश्याओं और व्यभचारिणियों का काम है। पतिव्रता स्त्री का सतीत्व और धर्म इसी में है कि वह अपने पति के सिवा दूसरे पुरुष की तरफ़ आँख उठाकर भी न देखे।

सेनापति–और जब पति मर जाय उस समय क्या करे ?

रानी–उस समय ?

सेनापति–हां, उस समय।

रानी–ग्रहस्थाश्रम और संसार के समस्त झगड़ों को त्याग कर ईश्वर की भक्ति और असहाय मनुष्यों की सेवा में अपना समस्त जीवन व्यतीत करे।

जगत में शील ही तो स्त्री का धन है ज़ेवर है।
सती को अपना सम्पन अपने जीवन से भी बढ़कर है॥
पतिव्रता जो है वह अपने पति का मान रखती है।
गवांकर ज़िन्दगी धर्म और सत् की आन रखती है॥

सेनापति-बड़े ही आश्चर्य की बात है, तुम इतनी विदुषी और ज्ञान वती होकर समाज के बनाए हुए ढकोसलों में फँसती हो क्या यह अन्याय की बात नहीं है कि पुरुष तो अपनी पत्नी के मरने पर दूसरी स्त्री के साथ विवाह करके स्वतंत्र-ता पूर्वक सुख और आनन्द भोग सकता है। किन्तु स्त्री अपने पति की मृत्यु के बाद दूसरे पुरुष से बात भी नहीं कर सकती ?

रानी-यह अन्याय नहीं, बल्कि प्राकृतिक नियम है, इस धर्म, शास्त्र की गुत्थी को सुलझाने के लिये समय की आवश्यक्ता है। अपनी स्त्री के होते हुए रावणने सीता पर कीचक ने द्रोपदी पर मन ललचाया और सूर्पनखा ने पर पुरुष पर मन ललचाया मालूम है उनकी कैसी दुर्दशा हुई ? क्या सीता जी के हरे जाने पर रामचन्द्र जी ने दूसरा विवाह किया था, क्या अभिमन्यू के मरने पर उत्तरा ने, पाण्डु के मरने पर कुन्ती ने दूसरा विवाह किया था, ... !

सेनापति-(बात काट कर) यह शास्त्रार्थ करने का समय नहीं, मैं फिर तुमसे कहता हूं कि जो मनुष्य हाथ में आये हुए अवसर को यूंही खो देता है, वह पीछे पछताता है। इस कारण तुम यह अवसर हाथ से न जाने दो और धर्म वर्म की पर्वा न करके मेरी प्राण प्यारी बनजाओ में वचन हारता हूं कि तुम्हें प्राणों से अधिक मानूंगा और कभी तुम्हारे हृदय को दुःख नहीं पहुँचाऊँगा ।

हक़ीक़त क्या है धन की, अर्पण अपनी शान करदूंगा ।
मैं अपना चैन, सुख, आराम, सब .क़ुर्बान करदूंगा ॥
तव्वसुम पर कहूं अब क्या, फ़िदा ईमान करदूंगा ।
नशीली मस्त आंखों पर, निछावर जान करदूंगा ॥
न क्यों चाहूं न क्यों समझूं, तुम्हें संसार से बढ़कर ।
मेरे मन का यह कहना है कि हो, कर्तार से बढ़कर ॥

रानी–यह बात है ?

सेनापति–हां ।

रानी–क्या तुम इस वचन का पालन करने के, लिये धर्म और परमात्मा की सौगन्द खा सकते हो ?

सेनापति–अवश्य ।

रानी–अच्छा यह बताओ तुम्हारा विवाह हो चुकाहै ?

सेनापति–हो चुका है ।

रानी–तुम्हारी स्त्री जीवित है ?

सेनापति–इसके पूछने का कारण ?

रानी–तुम्हें इस से क्या मतलब तुम मेरी बात का जबाव दो ।

सेनापति–हां जीवित है ।

रानी–वह मुझे देख कर क्या कहेगी ?

सेनापति–जिस समय तुम मेरी हो जाओगी, उसी समय मैं उसे छोड़ दूंगा ।

रानी–मेरे कारण एक निर्दोष स्त्री को धर्मशास्त्रानुसार बनाई हुई पत्नी को छोड़ दोगे ?

सेनापति–स्त्री तो क्या, जो वस्तु भी मेरे सुख के रास्ते में कांटे बन कर आड़े आयगी उसे अपने रास्ते से हटा दूंगा।

रानी–अच्छा एक बात और बताओ, क्या विवाह के समय ईश्वर और समाज के सामने उस क्वारी कन्या का हाथ अपने हाथ में लेकर यही प्रतिज्ञा की थी या नहीं ?

सेनापति–(घबराहट में) हां, हां, की तो थी।

रानी–क्या उस प्रतिज्ञा का यही पालन है जो तुम कर रहे हो ! इसको ज़रा सोचो और समझो।

सेनापति–इसका प्रयोजन ?

रानी–प्रयोजन यही कि जिस तरह तुम आज मेरे कारण अपनी निर्दोष विवाहिता स्त्री को छोड़ने को तय्यार हो, उसी प्रकार मुझ से भी अधिक सुन्दरी युवती को देखकर मुझे त्यागने को उद्यत हो जाओगे।

कपट से छल से जो परस्त्री को छलना है।
वह ज़िन्दगी में कभी फूलता न फलता है॥
बुराई मन में है जिसके, वह कब भला होगा।
जो धर्म का न हुआ वह किसी का क्या होगा॥

सेनापति–नहीं, नहीं, मैं शपथ पूर्वक कह सक्ता हूं कि तुम्हारे साथ ऐसा नहीं होगा।

रानी—निर्लज्ज, कपटी, दुराचारी, झूटी सौगन्द न खा।

सेनापति-रानी धारणी मैं जितना शान्ति पूर्वक बातें कर रहा हूं उतना ही तुम कठोर उत्तर दे रही हो। क्या तुम नहीं जानती कि एक पुरुष जितना प्रेम कर सक्ता है उससे अधिक घृणा, और शत्रुता कर सक्ता है।

रानी—यह डर और किसी को बताना तू नहीं जानता कि मैं एक क्षत्री राजा की पुत्री और एक क्षत्री राजा की धर्मपत्नी हूं मैं सतीत्व की महिमा को भली प्रकार जानती हूं और अपनी मान मर्यादा को प्राणों से अधिक प्रिय समझती हूं। मेरी रगरग में धार्मिक शिक्षा का रक्त संचार हो चुका है मैं अपने धर्म और सतीत्व की रक्षा के लिये जान दे देना एक खेल समझती हूं।

सेनापति-अच्छी बात है मैं चाहता था कि शान्ति और प्यार से काम बन जाए तो अच्छा है किन्तु तेरी बातों से प्रगट होता है कि जब तक शक्ति और पूर्ण बल से काम न लिया जायगा, उस समय तक तू सीधे मार्ग पर न आयगी।

मर्द कर सकता है क्या २ अब तुझे दिखलाऊंगा।
देखना सत पर तेरे क्यों कर विजय मैं पाऊंगा॥
तोड़ दूंगा आइना सत्पन का शीशे की तरह।
अब न समझो है जिसे समझेगो फिर अच्छी तरह॥

रानी—रे मूढ़! तू मेरा कुछ नहीं कर सकता।

सेनापति-कारण ?

रानी-कारण यही कि जिस तरह क्रोध में भरी भूकी शेरनी को देख कर, मृत्यु के भय से शिकारी का शरीर कांपने लगता है, उसी प्रकार एक पतिव्रता स्त्री के सत्पन के सामने कामी और दुराचारी मनुष्य की शक्ति घट जाती है।

नाम रोशन हो गया सत् का सती के तेज से।
चांद सूरज की बढ़ी शोभा सती के तेज से॥
गर्दनें वीरों की झुक जाती हैं इस के सामने।
नदियां बहने से रुक जाती हैं इसके सामने॥

सेनापति-स्त्रियों के आगे जिनकी गर्दनें झुक गईं वह वीर नहीं कायर होंगे, तू बड़ी देर से अपने सतीत्व का राग अलाप रही है। यदि इसमें कुछ शक्ति और बल है तो इसकी सहायता से अपनी रक्षा क्यों नहीं करती ?

रानी—रक्षा करूं ? किसकी, अपने सतीत्व की ? और वह भी किससे, एक कायर और नराधम नारकी से ! जो निर्बल, असहाय, निराधार, अबला स्त्री के सतीत्व को नष्ट करने के लिये उस पर अत्याचार करने को बड़ी बहादुरी समझता हो अरे मूर्ख, घमण्डी, अभी तूने सतीत्व और धर्मकी शक्ति नहीं देखी, क्या तू नहीं जानता कि पातिव्रत धर्म पति सेवा और शील ही स्त्रियों का श्रृङ्गार है आभूषण है। इसके बल पर वह देवताओं को स्वर्ग से उतार कर पृथ्वी पर ला सकती हैं,

सत्मार्ग पर चलने और शील को प्राणों से अधिक मानने वाली एक सती स्त्री अपने भुजाओं के बल से केवल इतना ही नहीं कि वह अपने शील धर्म की रक्षा कर सके तुझ जैसे कामी, मायावी लम्पटी पापाचारी का रक्त जल की धार के समान पृथ्वी पर बहा सकती है।

गवां कर अपना जीवन, सत् की जब महिमा बढ़ाती हैं।
मनुष्य क्या देवताओं को भी उससे लाज आती है॥
जो हैं बलवान् हट जाते हैं पीछे जान के भय से।
सती को देखकर गुस्से में धरती कांप जाती है॥

सेनापति–मुझे न देवताओं का भय है न धर्म और समाज की लज्जा। मेरे हृदय रूपी समुद्र में जो विषयरूपी दावानल अग्नि जल रही है यह बातें उसे कभी भी बुझा नहीं सकतीं। इस लिये जिस प्रकार भो होगा मैं आज अपने मन की कामनायें अवश्य पूर्ण करूंगा।

जो मनमें ठानली है उससे मुंह हरगिज़ न मोड़ूंगा।
तेरे धर्म और सत् को नष्ट करके आज छोड़ूंगा॥
अगर हटसे न बाज़ आई तो लाखों दुःख सहेगी तू।
बनाऊंगा तुझे अपनी मेरी होकर रहेगी तू॥

रानी–अरे मन्द बुद्धि कुछ ज्ञानसे काम ले, रावण जैसा बलवान् सती सीता का कुछ न बिगाड़ सका, दुर्योधन जैसा घमण्डी भरी सभा में जहां उसके हजारों सहायक उपस्थित थे अकेली

द्रोपती की लाज न उतार सका। जब वह दोनों कामी और अभिमानी पुरुष सतियों को दुःख और कष्ट पहुंचानेके कारण इतना ही नहीं कि संसार और समाज की दृष्टि में गिर गये, बल्कि दुनियां में उनका कोई नाम लेने और पानी देने वाला तक नहीं रहा उसी प्रकार तू भी एक सती स्त्री को दुःख पहुंचाकर कभी सुख और शांति नहीं पा सकता।

सेनापति—अच्छा तो हठीली स्त्री अब सावधान होजा।

इतना कहकर वह दुराचारी सेनापति रानी धारणी का उल्टा हाथ पकड़ कर पृथ्वी पर गिराना चाहता है, रानी धारणी फुर्ती के साथ सेनापति की कमर से खञ्जर निकाल लेती है सेनापति रानी के हाथ में खञ्जर देखकर डरता है और रानी का हाथ छोड़ कर हटजाता है।

रानी—डरगया, घबरा गया, एक स्त्री के हाथ में खञ्जर देखकर मृत्यु के भय से कांपने लगा, बोल, बोल ओ घातकी! वह तेरी वीरता क्या हुई? जिसकी डींगें मारता था क्या करूं असमर्थ हूं यदि अहिंसा धर्म के पालन का विचार न होता तो इसी समय तेरी नीच अपवित्र आत्मा कभी की नर्क में पहुंच गई होती। जा, मैं अपने धर्मानुसार तुझ पर दया करती हूं और अपना जीवन इस सतीत्व की वेदी पर बलिदान करती हूं।

इतना कह कर रानी धारणी अपनी छाती में खञ्जर भौंक लेती
है सेनापति आश्चर्य से रानी की मृत्यु को देखता है और
शोक करता है, राजकुमारी चन्दनबाला अपनी
माता की यह दशा देखकर दुःख से विलाप
करती है और इतना कह कर रानी के
शरीर पर मूर्छित होकर गिर
जाती है।

चन्दनबाला-हाय ! माता तू मुझे इस पापी निर्दयी सेनापति के
हाथ में अकेली छोड़ कर कहां चली गई।

(पटाक्षेप)

अङ्क २   दृश्य २

लाला ज्ञानी प्रसाद का मकान

महाशय रतनलाल जी लाला ज्ञानीप्रसाद को बहला फुसला
कर उनको इस पर तय्यार करलेने का प्रयत्न करते हैं
कि वह अपनी अष्टवर्षीया कन्या "सुशीला" का
सेठ मूलचन्द के साथ जिसकी आयु साठ
वर्ष की है, तीन हज़ार रुपये लेकर
विवाह करदे।

म० रतनलाल-फँसा और अच्छा मूर्ख जाल में फँसा, अब क्या है कुछ दिनों के लिये चैन ही चैन है। यदि लाला ज्ञानीप्रसाद जी ने इस नाते को स्वीकार कर लिया तो दो हज़ार, पूरे दो हज़ार यारों के हैं, मूलचन्द से तो मैंने पूरे पांच हज़ार रुपयों के लिये कह दिया है परन्तु मैं ऐसा मूर्ख और अज्ञानी नहीं जो समस्त रुपये लड़की के माता पिता को देदूं और स्वयम् डंडे बजाता फिरूं बस दो हज़ार अथवा ज़्यादा से ज़्यादा तीन हज़ार में यह कार्य हो जाना चाहिये ला० ज्ञानी-प्रसाद न मानेंगे तो उनके भाई और बहुत हैं लड़कियों की कमी नहीं आज सैंकड़ों क्या हज़ारों ऐसे लोभी और अज्ञानी पुरुष मौजूद हैं जो अत्यन्त प्रसन्नता पूर्वक अपनी नादान और निर्दोष कन्याओं को लक्ष्मी देवी पर भेंट चढ़ाने को

तय्यार हैं "भज कलदारम् भज कलदारम्" अच्छा अब ला० ज्ञानीप्रसाद जी को बुला कर टटोलना चाहिये कि अपनी पुत्री सुशीला के बारे में उनका क्या विचार हैं। अजी लाला ज्ञानीप्रसाद जी!

ला० ज्ञानीप्रसाद जी-(अन्दर से) कौन, महाराज रतनलाल जी, दास हाज़िर होता है (बाहर आकर) नमस्कार!

म० रतनलाल-नमस्कार, लाला साहिब नमस्कार, कहिये बाल बच्चे अच्छी तरह हैं घर में सब तरह कुशल तो है ना?

ला० ज्ञानीप्रसाद जी-आपकी दया और ईश्वर की कृपा से सब तरह कुशल हैं कहिये आज तड़के ही तड़के आपने किस कारण दर्शन दिये।

म० रतनलाल-यह सांसारिक झगड़े कुछ इस प्रकार जीवन के साथ लगे हुए हैं कि एक घड़ी के लिये भी पीछा नहीं छोड़ते मैं कई दिनों से यहां आने का विचार कर रहा था, बड़ी मुशकिलों से आज इतना समय मिला कि यहां तक आ सका.-"भज कलदारम् भज कलदारम्"

लाला ज्ञानीप्रसाद—यह मेरा सौभाग्य है जो मेरे घर तक आप के पवित्र चरण आये आज्ञा कीजिये कि मैं आपकी क्या सेवा कर सक्ता हूं?

म० रतनलाल-लाला जी आप अच्छी तरह जानते हैं कि मैं झूटे मनुष्य और झूट दोनों से अत्यन्त घृणा करता हूं। इसलिये

किसी को बुरा लगे अथवा भला जो कुछ कहना होता है साफ़ साफ़ कह देता हूं "भज कलदारम् भज कलदारम्।"

लाला ज्ञानीप्रसाद्—निश्चय, मैं इसको अच्छी तरह जानता हूं।

म० रतनलाल—और यह भी जानते हैं कि मुझे आपके और आप के बाल-बच्चों के साथ कितना प्रेम है।

लाला ज्ञानीप्रसाद्—अवश्य जानता हूं।

म० रतनलाल—इस कारण मैं कई दिनों से इस विचार में हूं कि ईश्वर की दया से अब आपकी पुत्री सुशीला स्यानी हो गई परन्तु अभी तक कहीं से उसकी कोई बातचीत नहीं आई भज "कलदारम् भज कलदारम्।"

लाला ज्ञानीप्रसाद्—महाराज इसमें मेरा क्या अपराध जब उसके भाग में होगा हो जायगा।

म० रतनलाल—यह तो ठीक है परन्तु माता पिता का कर्त्तव्य है कि अपनी सन्तानकी भलाई बुराईका हर समय ध्यान रक्खें।

लाला ज्ञानीप्रसाद्— पुत्र के लिये सब कुछ हो सक्ता है परन्तु बेटीवाला तो इस बारे में जीवन के अन्त तक एक शब्द तक मुंह से नहीं निकाल सक्ता।

म० रतनलाल—यह बेटीवालों के मित्र और सम्बन्धियों का कर्त्तव्य है कि वह इस कार्य में लड़की के माता पिता की सहायता करें और ऐसा ही विचार करके मैं आज यहां तक आया हूं।

लाला ज्ञानीप्रसाद्–यह आपकी कृपा है जो ऐसा विचार करते हैं।

म० रतनलाल–मैं इसे कृपा नहीं अपने जीवन का कर्त्तव्य समझता हूं इसलिये आप कहें तो मैं इसका कोई उपाय सोचूं? क्योंकि मेरे पास अक्सर ऐसे मनुष्य आते रहते हैं जो अपने लड़के या लड़की के विवाह की इच्छा रखते हैं आज-कल भी मेरे पास इसी नगरी के एक बड़े धनवान सेठ प्रतिदिन आते हैं उनकी पहली स्त्री का देहान्त हो चुका है घर में वाल-बच्चा भी नहीं है इसलिये वोह चाहते हैं कि किसी अच्छे कुल की कन्या से चाहे वोह ग़रीव ही क्यों न हो दूसरा विवाह करलें यदि आपकी आज्ञा होवे तो मैं अपने तौरपर उनसे बातचीत करूं, क्योंकि अभी तक मैंने उन्हें कोई उत्तर नहीं दिया है और न किसी दूसरी जगह कोई वात की है "भज कलदारम् भज कलदारम्।"

लाला ज्ञानीप्रसाद्–जैसी आपकी इच्छा।

म० रतनलाल–मैं क्या और मेरी इच्छा क्या जैसा आप चाहेंगे वैसा होगा अब रही मेरी इच्छा तो आप इतना अवश्य समझ लीजिये कि मैं जो कुछ कहूंगा वोह अच्छी तरह सोच विचार कर कहूंगा और आप के लाभ ही की वात कहूंगा। इस नगर ही के नहीं दूर दूर के पुरुष इस वात को जानते हैं कि इस वक्त तक जितने भी विवाह मेरे हाथों से हुए उनमें ईश्वर की कृपा से किसी प्रकार की बुराई पैदा नहीं हुई।

लाला ज्ञानीप्रसाद-सेठजी की आयु कितना होगी और उनका स्वभाव कैसा है ?

म० रतनलाल-स्वभाव की न पूछिये मैंने तो आज तक ऐसा स्वभाव किसी का देखा ही नहीं महात्मा हैं, पूरे महात्मा रही आयु सो धनवान् पुरुषों की आयु का देखना हो क्या पचास पचपन वर्ष की आयु भी कोई आयु है ?

लाला ज्ञानीप्रसाद-यह सत्य है फिर भी महाराज बालक का जोड़ कुछ बालक ही के साथ अच्छा मालूम होता है।

म० रतनलाल-वाह अच्छी उल्टी गंगा बहाई कमसिन कन्या का विवाह जब करे बड़ी आयु वाले पुरुष के साथ करे।

लाला ज्ञानीप्रसाद-क्यों महाराज इस अनमेल विवाह का कारण?

म० रतनलाल-कारण यही कि पुरानो पुरुष तजुर्वेकार संसार के सारे झगड़ों और गृहस्थी के नियमों को अच्छी तरह जानता है वह जिस चैन और सुख से अपने और अपनी स्त्री के जीवन को बिता सक्ता है एक बालक और युवक पुरुष वैसा कदापि नहीं कर सक्ता पति और पत्नी दोनों में से एक को तो अवश्य ही बुद्धिमान और समझदार होना चाहिये, यदि ऐसा न हो तो विवाह के बाद दोनों सुख नहीं भोग सक्ते। "भज कलदारम् भज कलदारम्।"

लाला ज्ञानीप्रसाद-ऐसा करने से समाज क्या कहेगी ?

म० रतनलाल-समाज कुछ नहीं कह सक्ती, जहां आपने समाजके

दो चार बड़े २ महा पुरुषों को हलुवा पूरी खिलाया और सौ पचास रुपये भेंट चढ़ाये कि वोह समस्त आपके साथी हैं क्या आप को नहीं मालूम कि आज कल चार-चार, पांच-पांच वर्ष की कन्याओं का साठ-साठ, सत्तर-सत्तर वर्ष की आयु-वाले पुरुषों के साथ विवाह हो रहा है।

लाला ज्ञानीप्रसाद–मुझे नहीं मालूम।

म० रतनलाल–वाह! अभी थोड़े दिनों की तो वात है कि एक सत्तर वर्ष की आयु वाले धनवान पुरुष ने एक चार वर्ष की कन्या के साथ अपना विवाह किया। समाज के एक दो नहीं सैकड़ों पुरुष इस विवाह में शरीक थे विरादरी के बड़े २ चौधरी मौजूद थे सुसराल जाते समय डोली या पालकी में विठाने के बदले एक पुरुष ने उसे गोद में ले लिया भीड़भाड़ देखकर वह नादान कन्या रोने लगी और जबकिसी प्रकार चुप न हुई तब उस समय एक बूढ़ी स्त्री ने रोटी का एक टुकड़ा उसके हाथ में देदिया। रोटी लेते ही वह कन्या चुप होगई।

ला० ज्ञानीप्रसाद जी–बड़े ही आश्चर्य की बात है।

म० रतनलाल–आश्चर्य कैसा? यदि आपके मन में किसी प्रकार का भय या सन्देह है तो आप पहिले विरादरी के बड़े बूढ़े पुरुषों और चौधरियों से पूछलें तब विवाह करें परन्तु मैं यह कहे विना नहीं रह सक्ता कि ऐसा अच्छा ठिकाना और ऐसे स्वभाव का वर मिलना असम्भव नहीं तो कठिन अवश्य है। "भज कलदारम् भज कलदारम्"

ला० ज्ञानीप्रसाद जी-नहीं महाराज आप झूट क्यों बोलने लगे, मेरा यह कहना है कि मैं लड़की की माता से भी पूछलूं ।

म० रतनलाल-अवश्य पूछलो बल्कि मेरे सन्मुख यहीं बुलाकर पूछलो ।

ला० ज्ञानीप्रसाद जी-जो आज्ञा । (अपनी स्त्री को बुलाने जाता है)

म० रतनलाल-हत्तेरे की वह मारा और चारों खाने चित मारा कैसा ज्ञानी को अज्ञानी बनाया ? महाशय रतनलाल जी, यह बुड्ढा तो कुछ कुछ राह पर आचला है अब रह गई बुढ़िया सो तुम्हारी पण्डिताई और चतुराई का यहां समय है बूढ़े को बातों से परचाया है तो बुढ़िया को धन दौलत का लालच देकर गांठना चाहिये ।

(ला० ज्ञानीप्रसाद और उनकी स्त्री रुक्मणि दोनों आते हैं)

रुक्मणि-(हाथ जोड़ कर) महाराज प्रणाम् ।

म० रतनलाल-प्रणाम् कहो बाई जी अच्छी तरह हो ?

रुक्मणि-महाराज की दया चाहिये ।

म० रतनलाल-बाई जी मैंने आपको इस लिये बुलाया है कि सुशीला अब स्यानी हो गई उसका विवाह कब करोगी ?

रुक्मणि-महाराज अभी तक कहीं से कोई बात ही नहीं आई ।

म० रतनलाल-बात, बात तो सब कुछ आसकी है पहिले आप दोनों तय्यार तो हों ।

रुक्मणि—ग़रीबों की तय्यारी ही क्या बेटी की जात घर में बिठाने के लिये तो होती ही नहीं आज हो या कल वह पराये घर अवश्य जायगी हां माता पिता होने के कारण हमारा यह कर्तव्य है कि जहां तक हो सके अच्छी जगह उसे व्याहें।

म० रतनलाल—इसी नगरी के एक बहुत बड़े सेठ की स्त्री का देहान्त हो चुका है कोई बाल बच्चा भी नहीं घर में ईश्वर की दया से लाखों का धन है वह आजकल दूसरे विवाह की चिन्ता में हैं कहो तो इस बारे में उनसे बातचीत करूं।

रुक्मणि—सेठ जी की आयू कितनी है।

म० रतनलाल—आयू को देखनी हो या लड़की के सुख और चैन को। मैं सत्य कहता हूं लड़की उम्र भर राज करेगी और तुम दोनों का बुढ़ापा भी आराम से कट जायगा। कन्हैयालाल की सब हालत मुझे मालूम है उससे किसी प्रकार की आशा न रक्खो पुत्र वही जो समय पर काम आवे।

रुक्मणि—परन्तु महाराज हम ग़रीब और वोह धनवान हमारी उनकी बराबरी क्या।

म० रतनलाल—इसकी चिन्ता न करो वह स्वयम् ग़रीब घर की लड़की चाहते, और दोनों तरफ का सारा ख़र्चा उठाने को तय्यार हैं और विवाह से पहले लड़की के माता पिता को हज़ार दो हज़ार रुपये नक़द भी देने को तैयार हैं।

रुक्मणि—रुपैया लेकर विवाह करने में तो बड़ी बदनामी होगी।

म० रतनलाल–कैसी बदनामी आजकल तो संसार का यह ख़ास नियम हो रहा है, रहा चौधरियों और समाज का सन्देह, इसका उपाय यह है कि कल सब लोगों को अपने घर पर बुलालो मैं सबको राज़ी कर लूंगा।

रुक्मणि–अच्छी बात हैं मगर महाराज दो हज़ार रुपये तो थोड़े हैं जब रुपये ही लेने ठहरे तो कम से कम चार हज़ार रुपये तो हों।

म० रतनलाल–इस वक्त ज़्यादा रुपये न मांगो विवाह हो जाने के बाद सब कुछ तुम्हारा ही है अच्छा मैं तीन हज़ार रुपये दिला दूंगा मगर एक बात याद रखना सेठ जी से कभी रुपयों के लेनदेन का ज़िक्र न करना क्यों कि ऐसी छोटी छोटी बातों से वह बहुत चिढ़ते हैं, अच्छा तुम कल सब से पूछलो मैं भी आऊंगा,

रुक्मणि–जो आज्ञा।

एक तरफ महाशय रतनलाल और दूसरी तरफ
लाला ज्ञानीप्रसाद और उनकी स्त्री
रुक्मणि जाती हैं।

अङ्क २ दृश्य ३

राजा शतानीक के सेनापति के मकान में चंदनबाला
बैठी हुई अपने माता पिता की मृत्यु और अपनी
बेकसी पर ख़ून के आंसू बहा रही है।

गायन

चंदनबाला—

न मित्र अपना न कोई साथी न कोई दुःख का बटाने वाला।
न कोई तसकीन देने वाला न कोई ढारस बंधाने वाला॥
दुःखी जो होते थे अपने दुःखसे रहा न धरती पै खोज उनका।
कुछ ऐसी तक़दीर अपनी फूटी कि जो है वो है सतानेवाला॥
कहां छुपूं किससे आस रक्खूं ज़मीं भी दुश्मन फ़लक भी दुश्मन।
यह आग मनमें लगाने वाली वो खोज अपना मिटाने वाला॥
फंसी है दुःख के भंवर में नैया लगाओ भगवन् इसे किनारे।
बजुज़ तुम्हारे नहीं है कोई भी डूबतों को तिराने वाला॥
उसीको दुःखड़ा सुनाओ अपना उसी से ऐ'नाज़'आस रक्खो।
वही है भक्तों को अपने ग़म से मुसीबतों से छुड़ाने वाला॥

दयामयी जननी! तू मुझे संसार के दुःख सागर में अकेली बहती हुई छोड़कर कहां चली गई। हा माता! प्यारी माता! तू तो मुझे अपने प्राण से भी बढ़कर प्यार करती थी आज वह तेरा सारा प्रेम क्या हो गया, क्या मुझे इस अत्याचारी का

शिकार होना पड़ेगा, क्या मुझे अपना सतीत्व और लाज़ गंवानी पड़ेगी ? नहीं नहीं प्यारी माता तू संतोप रख ऐसा कभी नहीं हो सकता । मैं भी तेरी ही तरह एक क्षत्री राजाकी पुत्री हूं मैंने तुझ जैसी शीलवती सती देवी का दूध पिया है तेरी तरह मैं भी सतीत्व और धर्म की रक्षा के कारण अपना जीवन गंवा दूंगी किन्तु तेरे दूध और अपने कुल पर कलंक का टीका न लगने दूंगी ।

यह जीवन है कि प्यारा धर्म है जग को बता दूंगी ।
रगों में जो लहू है उसको धरती पर बहा दूंगी ॥
लगाऊं दाग़ कोई अपने कुल पर हो नहीं सकता ।
जिऊं संसारमें लाज अपनी खोकर, हो नहीं सकता ॥

सेनापति —(दाखिल होकर) धीरज धरो राजकुमारी धीरज धरो ।

चन्दनबाला–"आगया" वही घातकी जिसने मेरी निर्दोष और सतवंती माता के प्राण लिए यहां भी आ गया ।

सेनापति—पुत्री तू ठीक कहती है मैं वही बदनसीब पापी हूं जिसने अपने नीच प्रस्ताव और कामदेव के चक्करमें फंसकर एक अबला स्त्री की मृत्यु का घोर पाप अपने सर पर लिया ।

चन्दनबाला–इसमें आश्चर्य की क्या बात है निर्दोषों को जान लेना और जीवों का रक्त बहाना तो तुम जैसे वीरों और शूरमाओं का अदना काम है इस कारण जहां आज तक

हजारों मनुष्यों का लहू जल की तरह इस धरती पर वहा चुके हो वहां आज और इस समय एक निर्दोष कन्या का ख़ून और सही।

कहां की लाज किसकी आबरू ख़ौफ़ो खतर कैसा?
जब उसका भय नहीं हृदय में फिर औरों का डर कैसा।
पलट जाये जो सौ सौ बार दम में अपनी बातों से।
बचै क्योंकर कोई उस दुष्ट पाखंडी की बातों से॥

सेनापति—राजकुमारी! कर्म के लिखे को कोई नहीं मिटा सकता जो होनहार होनी है वह लाख उपाय करो होकर ही रहती है राजा और रंक दोनों 'भवितव्यता' के वस में हैं काल चक्र किसी का पक्ष करना नहीं जानता इस कारण 'हे राजनन्दनी'! जो होना था वह हो चुका अब तुम अपने मनमें मेरी तरफ़ से ज़रा भी भय न आने दो मैं तुम्हें अपनी पुत्री के समान समझकर तुम्हारे धर्म और सतीत्व की रक्षा और तुम्हारे जीवन की ख़बरगीरी करूंगा।

चन्दनबाला—जिस मनुष्य ने केवल पाप और अत्याचार ही के कारण इस संसार में जन्म लिया हो जो निर्बल निःसहाय पतिव्रता स्त्रियों की लाज और धर्म बिगाड़ने ही को अपने जीवन का सबसे बड़ा कर्तव्य समझता हो। वह किसी निर्बल और अबला स्त्री पर दया तथा उसके धर्म और सतीत्व की रक्षा करे? यह अनहोनी बात मेरी समझ में तो आती नहीं।

सेनापति—तुम्हारा विचार ठीक है परन्तु जिस प्रकार बादलों में छुपा हुआ चन्द्रमा अचानक प्रगट होकर जंगल में रास्ता चलने वाले पथिकों को गढ़े में गिरने और ठोकर खाने से बचा लेता है उसी प्रकार हर मनुष्य के हृदय में दया और धर्म का दिया जल रहा है जो किसी किसी समय बड़े से बड़े पापी और दुराचारी के मन में भी दया और धर्म का चमत्कार पैदा कर देता है। राजकुमारी! तुम जितना बुरा मुझे समझ रही हो वास्तव में इतना बुरा नहीं हूं यह मेरा दुर्भाग्य था कि तुम्हारी माता की मृत्यु इस प्रकार हुई मैं उस मनहूस घड़ी को याद करके मन ही मन में आज तक पछताता और सर को धुनता हूं।

रात की नींद मुक़द्दर में न दिन का आराम।
मुझसा संसार में होगा न कोई भी नाकाम॥
बदले आंसू के लहू दिल का बहा करता है।
ग़म की अग्नि से शरीर अपना जला करता है॥

चन्दनबाला-तुम्हारे अफ़सोस भरे शब्दों से प्रगट होता है कि देर या सबेर परन्तु तुमने अपनी भूल स्वीकार करली है यदि वास्तव में ऐसा ही है तो तुम अपने पिछले जीवन के पापों का सरलता से प्रायश्चित्त कर सकते हो।

सेनापति—पुत्री मैं ऐसा ही करूंगा तुम अपने मन से, सारी

शंकाएं दूर कर दो घर में जाओ और आनन्द के साथ नहा धोकर भोजन इत्यादि करो ।

[राजकुमारी चंदनलाला के जाने के बाद]

हे भगवान् ! तुमसे संसार की कोई बात छुपी नहीं यह ठीक है कि मैं उस समय कामदेव के वस होकर सतवंती रानी धारणी पर बलात्कार करने को तैयार था परन्तु वह आत्मघात करले यह मेरी इच्छा न थी इस कारण मैं हाथ जोड़ कर प्रार्थना करता हूं कि क्षमा करो नाथ ! मेरे अपराधों को क्षमा करो ।

[सेनापति की स्त्री आती है]

स्त्री—क्यों जो तुम यहां क्या कर रहे हो ?

सेनापति—कुछ नहीं ।

स्त्री—(मुंह बनाकर) कुछ नहीं अच्छा तो यह बताओ कि यह सुन्दर सलोनी स्त्री कौन है ?

सेनापति—यह एक दुखियारी लड़की है जिसके माता पिता दोनों युद्ध में मारे गये ।

स्त्री—तुम इसे किस विचार से लाये हो ?

सेनापति—विचार, कैसा विचार ?क्या किसी दुखियारे मनुष्य की सहायता करना पाप है ?

स्त्री—मैं कब कहती हूं कि पाप है ।

सेनापति–तुमने अभी पूछा नहीं कि इसे किस विचार से लाये हो ?

स्त्री–यह तो मैं अब भी कहती हूं कि इसके यहां लाने का कारण ?

सेनापति–कारण यही कि हमारे कोई सन्तान नहीं है हम अपनी पुत्री समझ कर इसका पालन पोषण करेंगे और वर्ष दो वर्ष बाद किसी भले मनुष्य के साथ इसका विवाह कर देंगे सुनो यह ईश्वर की बड़ी कृपा है कि पाली पोषी लड़की मिल गई ।

स्त्री–बड़े ही दयालु ! बड़े ही ज्ञानी, क्यों न हो ? आज तमाम संसार में तुम्हारी दया और धर्म के झण्डे गड़े हुए हैं सैंकड़ों धर्मशालाएं बनी हुई हैं घर के द्वारे पर सदाव्रत जारी हैं जहां से प्रति दिन हजारों नङ्गों और भूकों को वस्त्र और भोजन मिलता है ।

सेनापति–ऐसा होना कोई बड़ी बात है ?

स्त्री–मैं कब कहती हूं कि बड़ी बात है ।

सेनापति–फिर ऐसी जली कटी बातों का कारण ?

स्त्री–कारण यही कि जब तक तुम ठीक ठीक बात न बताओगे मेरे मन को सन्तोष नहीं होगा ।

सेनापति–और क्या बताऊं कह तो दिया कि बिना मां बाप की लड़की है ।

स्त्री–यह तो मैं समझ गई परन्तु जिस इरादे से लाए हो वो क्यों नहीं बताते ?

सेनापति—जिस प्रकार तुम्हारे मन में खोट है उसी प्रकार तुम दूसरों के मन में खोट समझती हो।

स्त्री—तुम्हारे न बताने से क्या होता है मैं इस छोकरी के आते ही ताड़ गई।

सेनापति—क्या ताड़ गई हो ?

स्त्री—यही कि इसके साथ तुम्हारी कुछ न कुछ लगन अवश्य है।

सेनापति—तुम हिन्दू स्त्री और जिन धर्म की सेविका होकर एक निर्दोष क्वारी कन्या पर ऐसा कठोर दोष लगाती हो। डरो ! डरो सती की आह और उसके शराप से डरो।

स्त्री—हां हां मैं भी तो यही कहती हूं कि यदि वह सती न होती तो इतनी अधिक सुन्दर और युवा होकर एक पर पुरुष के साथ इस तरह क्यों चली आती।

सेनापति—इसका दुर्भाग्य है कि इधर तो माता पिता की मृत्यु हो गई उधर जिन मनुष्यों के पाले पड़ी वोह दया और स्वभाव से सलूक करने के बदले उलटे उसके सतीत्व और धर्म पर सन्देह करते हैं।

स्त्री—अजी वह सीता और सावत्री हो सही परन्तु मेरे घर में उस का कुछ काम नहीं तुम इसे अभी अभी यहां से निकाल दो यदि ऐसा न करोगे तो ... ... ।

सेनापति—(बात काट कर) तो क्या करोगी ?

स्त्री–मैं ख़ुद जाकर राजा से सब हाल कह दूंगी उस समय तुम्हारा क्या हाल होगा इसे तुम अच्छी तरह समझ सकते हो।

[इतना कह कर सेनापति की स्त्री चली जाती है सेनापति मन ही मन में सोचता है।]

सेनापति–अब क्या करूं अगर स्त्री का कहना मानता हूं तो न जाने इस ग़रीब की क्या दुर्गति बने और कहां कहां मारी फिरे अगर इस निर्दोष कन्या पर दया करता हूं तो न जाने दर्बार से मुझे कैसा कठोर दण्ड दिया जाय (कुछ देर सोच कर) बस यही ठीक है इसे बाज़ार में ले जाकर बेच देना चाहिये लड़की सुन्दर है जो कोई इसे मोल लेगा वह अवश्य इसे अच्छी तरह रक्खेगा।

(जाना)

अङ्क २ । दृश्य ४

(देवी का मन्दिर)

कुछ पशु और दो निर्दोष मनुष्य रस्सियों से बँधे हुए खड़े हैं
शिवालय के दरवाज़े पर देवी की मूर्ति के सामने
बैठे हुए पुजारी लोग देवी की पूजा
कर रहे हैं ।

गायन ।

शुभ घड़ी है यह गाओ बजाओ ।
देवी माता को जल्दी रिझाओ ॥
वेद शिक्षा के पालन से मित्रो ।
धर्म की जग में शोभा बढ़ाओ ॥
इनको धरतीके ऊपर लिटाकर ।
भोग उसको लहू का लगाओ ॥
होके निर्भय चलाओ छुरी तुम ।
वीरता अपनी सबको दिखाओ ॥
शुभ घड़ी है यह गाओ बजाओ ॥

मन्दिर का महन्त—धर्म के रक्षको, और देवी देवताओं के सच्चे भक्तो ! कैसी शुभ और मनोहर घड़ी कैसा पवित्र और उत्तम समय, आहा ! इससे बढ़कर मनुष्य का और क्या सौभाग्य हो सकता है कि वह अपनी सच्ची भक्ती और सेवा से देवी

देवताओं को प्रसन्न कर सके अपना तन मन धन सब कुछ उनके नाम पर अर्पण करके केवल यही नहीं कि आनन्द और शान्ति प्राप्त करे बल्कि अपनी आत्मा को सदा के लिये दुःख सुख के बखेड़ों से स्वतन्त्र कर दे।

सुख ही सुख है लोक में परलोक में उद्धार है।
देवता प्रसन्न हैं हमसे तो बेड़ा पार है॥
आज कर रक्खो जो करना है तुम्हें कलके लिए।
पेड़ की करना है रखवाली मनुष्य फलके लिए॥

पहिला शिष्य—परन्तु गुरु महाराज! आजकल के मनुष्य कुछ ऐसे अभागे और मूर्ख हैं कि यदि उन्हें कोई कल्याणकारी उपदेश सुनाया जाय, तो वे उसको ग्रहण करने के बदले उलटे उपदेश और धर्म दोनों का ठट्ठा उड़ाते हैं।

महंत—उड़ाने दो, उन मूर्खों को ठट्ठा ही उड़ाने दो। प्यारे बालको! हमें ऐसे अधर्मी और अज्ञानी पुरुषों की बातों से कभी हतोत्साहित नहीं होना चाहिये यह कोई आज नई बात नहीं है इन दुराचारी और मूर्ख लोगों का सदा से ऐसा ही नियम है। यदि ऐसा न हो तो आज संसार में चारों ओर कभी इस प्रकार पाप और हाहाकार की पुकार भी न हो।

धर्म को धर्म के नियमों को जो अच्छा कहती।
आत्मा कष्ट उठाती न मुसीबत सहती॥
पाप का खोज न मिलता न बुराई रहती।

हर तरफ धर्म की संसार में धारा बहती ॥
धर्म जीवन से यदि हमको प्यारा होता।
अपनी मुक्ति का अवश्य आज सहारा होता ॥

दूसरा शिष्य—महाराज आपका कहना सत्य है इस छल और कपट से भरे हुए मायारूपी संसार ने केवल एक दो ही को नहीं सैकड़ों हज़ारों भोले भाले मनुष्यों को अपने झूटे प्रेम के फंदे में कुछ इस प्रकार जकड़ रक्खा है कि वह लाख यत्न करने पर भी उससे छुटकारा नहीं पा सकते। काम क्रोध मोह लोभ ने कुछ ऐसी पट्टी आंखों पर वांधी है कि वे अपनी बुराई और भलाई को भी नहीं देख सकते।

बताओ रास्ता सीधा तो यह उलझते हैं।
पिलाये कोई जो अमृत तो विष समझते हैं ॥
हज़ार बार कहो तुम मगर असर ही नहीं।
सुना हैं कानोंने क्या दिलको कुछ ख़बर ही नहीं ॥

महंत—कभी तुमने यह भी विचार किया कि ऐसी बातों का कारण क्या है ?

दूसरा शिष्य—नहीं ?

महन्त-जब से लोगों ने वेदों के बनाये हुए नियमों को छोड़ कर इधर उधर की सुनी सुनाई बातों पर चलना शुरू किया। तब ही से बुराइयां उत्पन्न होती गईं इन मूर्ख मनुष्यों ने ये विचार न किया कि हमारे देवताओं की बनाई हुई बातें किस

प्रकार झूटी हो सच्ची हैं और जब सब कुछ हमारे वेदों में मौजूद है तो फिर हमें दूसरों की शिक्षा और उनके उपदेश से सम्बन्ध ? और न कभी इस बात पर विचार किया कि उन्होंने यह बातें सीखीं कहां से हमारे ही वेदों को पढ़ पढ़ कर आज यह लोग इस योग्य हो गये कि उनमें बुराइयां बताने लगे।

पढ़ाया है जिन्हें वर्षों, वही हमको पढ़ाते हैं।
सिखाया बोलना जिनको, वो अपना मुंह चिड़ाते हैं॥
जो कल निर्बल थे, वह बलवान बनकर बल दिखाते हैं।
हमीं से सीख कर हम पर, ही अब ख़ञ्जर चलाते हैं॥
भलाई का नतीजा, इस ज़माने में बुराई है।
कपट के बाण छुप छुप कर, चलाना शूरमाई है॥

दूसरा शिष्य–ठीक है, गुरु महाराज का कहना बिलकुल ठीक है।

क़ैदी मनुष्य–अबे ओ ठीक और बिलकुल ठीक के बच्चो ! यह तो बता कि तुमने हम निर्दोषों को राह चलते किस लिये पकड़ा और रस्सियों में बांध कर यहां किस कारण लाए हो ?

पहिला शिष्य–गुरु महाराज की आज्ञानुसार आज देवी माता के चरणों पर तुम्हारी भेट चढ़ायेंगे।

क़ैदी मनुष्य–हमारा कुछ अपराध ?

पहिला शिष्य–कुछ नहीं।

मनुष्य नं १—फिर भेट चढ़ाने का कारण ?

शिष्य नं० १—गुरू की आज्ञा और धर्म का पालन।

मनुष्य नं १—वाहरे धर्म! और वाहरे धर्म के पालन हारो इस अत्याचार का नाम धर्म का पालन नहीं किन्तु धर्म की हानि है।

शिष्य नं० १—तू धर्म के आदर को उसका अपमान समझता है यह तेरी भूल है:—

हम इस समय ज्ञान को लीला रचायँगे।
वेदों में जो लिखा है वह करके दिखायँगे॥
भक्ती से देवताओं को अपना बनायँगे।
देवी को आज भोग लहू का लगायँगे॥
दुःख सुख से छूट जाओगे आनन्द पाओगे।
चलकर यहां से स्वर्ग में तुम सीधे जाओगे॥

मनुष्य नं० २—अरे ओ अज्ञानियो और मूर्खो! यह तो बताओ कि तुमने अपने लिये कौनसी जगह सोची है स्वर्ग या नर्क।

शिष्य नं० १—स्वर्ग।

मनुष्य नं० २—याद रक्खो अगर इसी प्रकार हम जैसे निर्दोष और निरापराधी मनुष्यों से स्वर्ग को भर दोगे तो फिर तुम्हें तुम्हारे गुरु को और तुम्हारे सारे कुल को नर्क में जाना पड़ेगा।

शिष्य नं० १—क्या कहा ? हम, और नर्क में जायँगे ?

मनुष्य नं० २—निश्चय, तुम नर्क ही में जाओगे ।

शिष्य नं० १—कारण ?

मनुष्य नं० २—कारण यही कि जिस तरह तुम बलिदान करके हमें स्वर्ग भेज रहे हो उसी तरह हम भी वहां डंडे मार मार कर तुम्हें नर्क में ढकेलेंगे ।

मनुष्य नं० १—हमें अवश्य ऐसा करना ही होगा भला यह भी कोई न्याय की बात है कि तुम तो बिना कारण हम पर इतनी दया करो कि गुरु की आज्ञा और धर्म का पालन करने के लिए हम जैसे महापापियों को स्वर्ग में भेजो और हम इस दया का उपकार मान कर तुम्हें नर्क में भी न पहुंचायें ।

महन्त—इन मूर्ख और बुद्धिहीन मनुष्यों को समझाना बुझाना बेकार है देवी की पूजा का समय आगया इस कारण पहिले एक एक पशु को यहां लाकर उसके रक्त से देवी के माथे पर टीका लगाओ और फिर इन पुरुषों का बलिदान दो ।

(गुरू महाराज की आज्ञा पाकर एक चेला एक पशु को घसीटता हुआ देवी के सामने लाता है और दूसरा चेला तलवार सँभाल कर जैसे ही उस पशु की गर्दन काटना चाहता है कि महावीर भगवान् वहां प्रवेश करते हैं)

भगवान् महावीर—ठहरो, ठहरो, धर्म के नाम पर अत्याचार

करनेवाली ठहरी । हैं यह कैसा विचित्र दृश्य अपने ही समान आत्मा रखनेवाले जीवों पर इतना भीवत्स अन्याय ! शोक ! शोक !! महा शोक !!!

महन्त-(हँसकर) वाह महात्मा जी अच्छी कही पुण्य को पाप बताना आप ही का काम है भला यह तो कहिए कि देवताओं ने वेदों को किस कारण बनाया है ?

भगवान् महावीर-मनुष्य को बुरी और खोटी बातों से बचाने और उसका उद्धार करने के कारण ।

महन्त-क्या वेद और शास्त्र मनुष्य को पाप और अत्याचार करने की आज्ञा दे सकते हैं ?

भगवान महावीर-नहीं ।

महन्त-क्या वोह कार्य पाप और अत्याचार हो सक्ता है जो वेद शास्त्र के अनुसार किया जाय ।

भगवान महावीर—कदापि नहीं ।

महन्त-तो हम जो पशुओं और मनुष्यों का बलिदान देवताओं को देते हैं यह किस प्रकार पाप कहलाने के योग्य हैं ।

भगवान महावीर-इस प्रकार कि संसार की सारी बुराइयों की जड़ 'हिन्सा' है वास्तव में जिस मनुष्य का हृदय दया के भाव से ख़ाली है वोह मनुष्य कहलाने का अधिकारी नहीं ।

महन्त-कारण ?

भगवान महावीर-कारण यही कि जो मनुष्य दूसरों पर दया करना नहीं जानता वोह अपनी आत्मा पर भी कभी दया नहीं कर सक्ता ।

महन्त-क्या हमारी आत्मा भी हमारी दया की इच्छुक है ।

भगवान महावीर—है और अवश्य है ।

महन्त-वोह किस तरह ?

भगवान महावीर—जिस प्रकार एक कांटे के चुभने से हमें दुःख प्राप्त होता है उसी प्रकार उस कांटे के चुभने से एक पशू को भी तकलीफ़ होती है जब दुःख और सुख के लिहाज़ से मनुष्य और पशु दोनों बराबर हैं तो क्या वजह कि हम अपनी इच्छा पूरी करने के लिये दूसरों को दुःख पहुंचाएं याद रक्खो दूसरों को सताने और जीव हत्या करने से अधिक घोर पाप और कोई पाप इस संसार में नहीं । जो मनुष्य ऐसा घोर पाप करता है न तो सुख और शांति प्राप्त कर सक्ता है और न उसकी आत्मा मुक्ति और मोक्ष का पद पा सक्ती है ।

महन्त-बड़े आश्चर्य की बात है ।

भगवान महावीर—इसमें आश्चर्य की क्या बात है ? "अवश्यमेव भोगतव्यम् कृतम् कर्म शुभाशुभम्" जैसा कोई करेगा उसका फल उसे अवश्य भोगना होगा, क्या राजा क्या रङ्क यहां तक कि बड़े २ तीर्थंकर चक्रवर्ती बलभद्र भी कर्मों के चक्कर से नहीं बचने पाते ।

महंत—अर्थात् ।

भगवान महावीर—अर्थात् यही कि प्राणी मात्रको बोये हुए कर्मरूपी वृक्ष के कटुक फल अवश्य चखने पड़ते हैं संसार में औरों की तो बात क्या जितनी भी महान् आत्माएं हुई हैं वह भी इनके चंगुल से न बचने पाईं । द्रोपदी को पाण्डवों के होते हुए भी भरी सभा में कीचक की लात खानी पड़ी, अर्जुन जैसे धनुर्धारी योद्धा को जिसके कि धनुष टङ्कोरसे देवता तक कांपते थे, एक वर्ष ज़नाना बनकर रहना पड़ा, भगवान ऋषभनाथ जो कि तीन लोक के स्वामी, भरत चक्रवर्ती जैसे जिनके पुत्र, देवेन्द्र जैसे उनके सेवक उन्हें भी भाग्य के फेर से १ वर्ष १३ दिन भूका रहना पड़ा, रामचन्द्र जी को प्राणों से अधिक प्रिय होने पर भी सीता जी को गर्भावस्था में स्वयम् रामचन्द्र की आज्ञानुसार वनों में भटकना पड़ा, यह सब क्यों ? कर्म बड़े बलवान् हैं इनके आगे किसी को कुछ नहीं चलती !

महन्त-कर्मों का फल देने वाला तो ईश्वर है, और उसी को प्रसन्न करने के लिये उसीके निमित्त हम यज्ञों में मनुष्य और पशुओं का बलिदान करते हैं, जब वह हम पर प्रसन्न हो जायगा तब ये विचारे कर्म हमारा कर ही क्या सकते हैं ?

भगवान महावीर —अहा ! मेरे भोले भाई यही तो तुम भूल करते हो, जब यह समझते हो कि कर्मों का फल देने वाला ईश्वर है, तो मानना पड़ेगा कि संसार के समस्त जीवों का

बनाने वाला भी वही है और तुम्हारे प्रत्येक कार्य को यहां तक कि घट २ की बात को भी जानता है।

महंत—जानता ही नहीं बल्कि घट २ में विराजमान है वह सर्व व्यापक है संसार में ऐसी कोई वस्तु नहीं जिसमें वह प्रकाशवान न हो! हम तुम पशु पक्षी आदि सब उसी के हैं, वह दयालू, दीनबन्धु, और सर्व शक्तिवान है।

भगवान महावीर—जब यह बात है तो शान्त हृदय से विचार करो और सोचो कि आया हमारे इन कार्यों से ईश्वर प्रसन्न हो सकता है?

महंत—इसका प्रयोजन? इसका तात्पर्य?

भगवान महावीर—प्रयोजन और तात्पर्य यही कि जब वह दयालू है तब वह इनका वध देखकर प्रसन्न होगा या दुःखी जब प्राणी मात्र का बनाने वाला भी वही है तब तुम्हें उसकी बनाई हुई सृष्टि के नाश करने का क्या अधिकार है? यदि ईश्वर सर्वव्यापक है तो मानना पड़ेगा कि मुझमें और तुममें तथा इन बंधे हुए मनुष्यों और पशुओं के हृदय में भी ईश्वर विराजमान है।

महंत—इसमें क्या सन्देह हो सकता है?

भगवान महावीर—और तुम यह भी जानते हो कि वह सबका भला चाहने वाला है।

महंत—निश्चय वह दीनबन्धु दयालू है।

भगवान महावीर—जब वह तुम्हारे कथनानुसार इन पशुओं और मनुष्यों में भी विराजमान है तब इस पत्थर की मूर्ति पर उसी को बलिदान करते हो यह क्या तुम्हारी भूल नहीं है ?

महंत—कैसी भूल और किसकी भूल ?

भगवान महावीर—तुम्हारी भूल और किसकी भूल ! एक भाई अपने दूसरे भाई का वध करता है, तो क्या उसका पिता प्रसन्न हो सकता है ? कदापि नहीं । इसी प्रकार ईश्वर की भी हम तुम पशु पक्षी सब सन्तान हैं इनके भी हमारे जैसी जान है, यह भी हमारी तरह सुख चाहते हैं और दुःख से डरते हैं ।

महंत—आह यही तो हम कहते हैं, जो पशु पक्षी अथवा मनुष्य देवता के निमित्त बलिदान किया जाता है, वह सीधा स्वर्ग में जाता है. ऐसा हमारे धर्म शास्त्र का प्रमाण है और वह धर्म शास्त्र भी ईश्वर के बनाये हुए हैं अतएव हम ईश्वर की आज्ञा पालन करना अपना प्रथम कर्तव्य समझते हैं ।

भगवान महावीर—यदि यज्ञों में बलिदान करने से मनुष्य और पशु स्वर्ग पा सकते हैं तो इतना आडम्बर रचने की आवश्यकता ही क्या है ? तुम और तुम्हारे कुटुम्बी जन भी तो स्वर्ग की इच्छा रखते होंगे ।

महंत—स्वर्ग प्राप्ति की इच्छा हो से तो यज्ञों में पशुओं और मनुष्यों का बलिदान करते ही हैं ।

भगवान महावीर—तब क्यों नहीं अपना तथा कुटुम्बी जनों का ईश्वर के निमित्त बलिदान करते जिससे स्वर्ग में आसानी से पहुंच सको।

महंत—(गुस्से में होकर) क्या कहा हम अपने बच्चों को मार डालें, तुम्हें ऐसी बात कहते शर्म नहीं आती, अबकी ऐसी बात मुंहसे निकाली तो ज़बान खींच लूंगा।

भगवान महावीर—शान्त महंत जी शान्त अब समझो जैसे तुम्हें अपने बच्चोंके प्राण प्यारे हैं उसी प्रकार इन्हें भी अपना जीवन प्यारा है!

जब तुम कहते हो कि ईश्वर सर्व शक्तिवान है तो उसे क्या आवश्यक्ता थी जो वह तुम्हें बलिदान को आज्ञा देता, यदि उसे मांस की इच्छा होगी तो वह स्वयम् प्राप्त कर सक्ता है।

महंत—भगवान को इच्छा नहीं किन्तु भगवान को प्रसन्न करने के लिये उसके पुजारी ऐसा करते हैं।

भगवान महावीर—शाबास! जब भगवान को किसी प्रकार की इच्छा ही नहीं, तब तुम्हारी स्तुति करने न करने से होता ही क्या है। वह तो न रागी है न द्वेषी है उसे संसार के किसी भी झगड़े से प्रयोजन नहीं! न वह किसी को सुख देता है न दुःख।

महन्त—जब वह किसी को सुख दुःख ही नहीं देता तो संसार उसकी उपासना क्यों करता है?

भगवान महावीर–जैसे यह जीव कर्म करता है वैसे ही उसको फल प्राप्त होता है, ईश्वर उपासना करने से, दया धर्म पालन से, प्राणी मात्र की सेवा करने से, शुभ कार्य और इनके विपरीत आचरण करने से अशुभ कर्म बन्धन हैं जिस प्रकार कुम्हार का चाक लकड़ी के लगाने से चारों तरफ घूमता है। उसी प्रकार यह जीव अनादि काल से इन कर्मों के चक्कर में फँसकर संसार में अनेक कष्ट भोगता हुआ भ्रमण कर रहा है।

महंत–इस उपदेश से हमारे कार्य का सम्बन्ध ?

भगवान महावीर–सम्बन्ध अभी तक नहीं समझे ?

महंत–(सिर हिला कर) लेश मात्र भी नहीं।

भगवान महावीर–अच्छा सुनो ! यह आत्मा दर्शनोपयोग और ज्ञानोपयोग मयी है किन्तु कर्मों ने इसके शुद्ध स्वरूप को आच्छादित कर रखा हैं जिस प्रकार एक तूंबे के मिट्टी लग-जाने से वह पानी में डूब जाता है किन्तु ज्योंही मट्टी धुल जाती है कि वह तूंबा पानी के ऊपर आजाता है इसी प्रकार इन कर्मों ने आत्मा के ज्ञान गुण को ढक दिया है किन्तु जैसे ही यह जीव तपश्चरण करके कर्मों का नाश करता है वैसे ही यह आत्मा जीवन मरण के दुःख से छुटकारा पाकर केवल ज्ञान प्राप्त करके परमात्म पद प्रात कर लेता हैं।

महंत–झूट बिलकुल झूट ! अजी महात्मा जी यह पट्टी औरों को

पढ़ाइये यदि ऐसा ही होता जैसा आप कहते हैं तो कभी हमारे धर्म शास्त्र बलिदान की आज्ञा नहीं देते ।

भगवान महावीर-धर्म शास्त्र किसे कहते हैं ?

महंत-"वस्तु स्वभावो धर्मः" अर्थात् वस्तु के स्वभाव को धर्म और जिसमें इन वस्तुओं का कथन हो उसे शास्त्र कहते हैं और वही शास्त्र हमें मान्य हैं ।

भगवान महावीर-और वस्तु स्वभाव के विपरीत जिस शास्त्र में कथन हो उसे क्या कहोगे ?

महंत-(झुंजला कर) कहेंगे क्या ! वह खोटे उसके मानने वाले खोटे ।

भगवान महावीर-अच्छा बताओ मनुष्य का स्वभाव क्या है ?

महंत-सेवा करना ।

भगवान महावीर-आकाश का ?

महंत-स्थान देना ।

भगवान महावीर-चांद और सूरज का ?

महंत-प्रकाश देना ।

भगवान महावीर-अग्नि और जल का ?

महंत-गर्म और शीत ।

भगवान महावीर-यदि यह सब अपने स्वभाव को छोड़दें तो क्या अवस्था होगी ?

महंत–क्या वेहूदा प्रश्न है ? भला कोई अपने स्वभाव को छोड़ सकता है, यदि एक भी वस्तु अपने धर्म को छोड़दे तो अनर्थ हो जाय, महाराज ।

भगवान महावीर–जब यह बात है, कि मनुष्य का स्वभाव प्राणी-मात्र की सेवा [रक्षा] करना है, तो तुम लोग क्यों प्राकृतिक नियम में बाधा डालते हो ।

[महंत मौन रहता है]

भगवान महावीर–क्यों मौन क्यों हो गये, बोलो, बोलो, हृदय के भाव स्पष्ट कहो ।

महंत–भगवन ! यदि आपका कथन सत्य है तब हम क्यों कर अपना कल्याण कर सकते हैं और किस प्रकार परमात्मा की शरण में पहुंच सकते हैं ?

भगवान महावीर–परमात्मा की शरण में क्या स्वयम् परमात्मा बन सकते हो ।

महंत–हे देव ! आप यह कैसा आश्चर्य जनक कथन कर रहे हैं भला यह जीव भी परमात्मा हो सक्ता है ।

भगवान महावीर–हे भव्य जीवो ! इसमें आश्चर्य की क्या बात है, प्राणीमात्र को समान अधिकार है आत्मा ही तो परमा-त्मा होता है, मोक्ष तो इस जीव का जन्मसिद्ध अधिकार है क्या चींटी, क्या हाथी, क्या राजा, क्या रंक, क्या ब्राह्मण,

क्या शूद्र सभी अपने अष्ट कर्मों का नाश करके मोक्ष प्राप्त कर सकते हैं।

महंत–यह क्योंकर ?

भगवान महावीर–शराब, मांस, जूआ, परस्त्री सेवन का त्याग फिर क्रम से श्रावक [गृहस्थी] के व्रत पालन करने से पश्चात् जैनेश्वरी दीक्षा ग्रहण करके बारह भावनाओं का चिन्तवन करने से साधु के समस्त चरित्र का पालन करके तप द्वारा कर्मों को नष्ट कर देने पर।

महंत–[चरणों में सिर रख कर] गुरु महाराज आपके मनोहर शब्दों ने मेरे हृदय में दया का चमत्कार उत्पन्न कर दिया मेरे आंखों से अज्ञानता के पर्दे हट गये और साफ़ साफ़ प्रगट हो गया कि ये पुस्तकें जिनको हम आज तक धर्मशास्त्र समझ रहे थे वास्तव में शास्त्र नहीं पाखण्डियों के मनघड़न्त क़िस्से हैं।

आकाशवाणी–भगवान महावीर स्वामी की जय।

महंत और चेले–[आश्चर्य के साथ] कौन ! भगवान महावीर स्वामी [चरणों पर गिर कर] नाथ क्षमा कीजिये हमारे अपराधों को क्षमा कीजिये।

भगवान महावीर–शान्त मित्रो शान्त तुम्हारा कल्याण हो।

तमाम लोग–बोलो भगवान महावीर स्वामी की जय।

तमाम पशू और मनुष्य भगवान के चरणों में शीश नवाते हैं आकाश से फूलों की वर्षा होती है एक तरफ हिंसा का दुखी चेहरा और दूसरी तरफ अहिंसा का हँसता हुआ मुखड़ा दिखाई देता है।

अङ्क २ दृश्य ५

लाला ज्ञानीप्रसाद का घर

बिरादरी के लोग और चौधरी वग़ैरह जमा होकर इस बात पर विचार करते हैं कि वृढ़े पुरुषके साथ कमसिन कन्या का विवाह करना ठीक है या नहीं महाशय रतनलाल चौधरियों को रुपये का लालच देकर ऐसे विवाहको धर्म और शास्त्रके अनुसार जायज़ कहला लेता है चौधरियों की यह हटधर्मी और निर्दोष बालिका पर ऐसा अत्याचार देखकर लड़की का भाई कन्हैयालाल और उसके साथी बिगड़ जाते हैं।

[कन्हैयालाल का प्रवेश]

गाना

कन्हैयालाल—

कहां तक देशभक्तों, देश वालों को, सताओगे ।
गले पर बेगुनाहों के छुरी कब तक चलाओगे ॥
यही हैं ढंग करनी के तो इसमें शक नहीं बिल्कुल ।
कि तुम संसारसे एक रोज़ जाति को मिटाओगे ॥
हमें आशा यह थी रक्षा करोगे धर्म की अपने ।
ख़बर क्या थी कि धर्मी बनके तुम ये गुल खिलाओगे ॥
अनाथोंको सताकर सुखकी आशा हो नहीं सकती ।
समझलो बोओगे जो कुछ वही आखिर में पाओगे ॥
जो बुद्धिमान हो तो 'नाज़'के कहने को सच जानो ।
कि आंसू की जगह आंखों से खूने दिल बहाओगे ॥

ऐसा अन्याय इतना अत्याचार साठ वर्ष के बूढ़े पुरुष के साथ आठ साल की कन्या का विवाह न जाने पिता जी और माता जी को क्या हो गया जो इस पाखंडी रतनलाल की बातों में आ गये मैंने बहुत कुछ समझाया परन्तु उन्होंने एक भी न सुनी अच्छी बात हैं चाहे इधर की दुनिया उधर हो जाय किन्तु जब तक मेरे शरीर में आत्मा मौजूद है मैं कभी अपनी प्यारी और निर्दोष बहन पर ऐसा घोर अत्याचार न होने दूंगा। सुना है कि आज पिता जी ने इस विवाह

के बारे में पूछने और सलाह करने के लिये बिरादरी के बड़े बूढ़ों और चौधरियों को बुलाया है चौधरी क्या कहेंगे यह मैं अच्छी तरह जानता हूं इसलिये पहिले ही से उसका उपाय करना चाहिये (कुछ सोचकर) बस ये ठीक है मैं भी अपने दो चार मित्रों को बुला लाऊं और इस पञ्चायत में विघ्न डाल दूं।

(कन्हैयालाल के जाने के बाद लाला ज्ञानीप्रसाद और उनकी स्त्री रुक्मिणी का प्रवेश)

रुक्मणी—क्यों जी अगर बिरादरी के पुरुषों और चौधरियों ने न माना तो क्या करोगे ?

लाला ज्ञानीप्रसाद—महाशय रतनलाल जी ने कहा है कि चौधरियों को राज़ी कर लेना मेरा काम है और जब चौधरी राज़ी हो गये तो फिर बिरादरी के दूसरे लोग राज़ी हों या न हों इसकी चिन्ता नहीं क्योंकि बिरादरी में जो कुछ करते हैं वह चौधरी ही करते हैं।

रुक्मणी—और कुछ कन्हैयालाल ने झगड़ा उठाया तो।

लाला ज्ञानीप्रसाद—मेरे होते कन्हैया को बोलने का अधिकार ही क्या है।

रुक्मणी—अधिकार हो या न हो वह बोले बिना कभी नहीं रहने का क्योंकि उसे सुशीला से अधिक प्रेम है वह ज़रा २ सी बात में उसकी पच करता और जहां किसी काम काज के

बिगड़ने पर मैंने सुशीला को भला बुरा कहा तो झट उसकी तरफ से लड़ने मरने को तैयार हो जाता है।

लाला ज्ञानीप्रसाद—ये और बात है छोटी बहिन होने के कारण वो उसका पक्षपात करता है परन्तु यह तो सुशीला के लाभ की बात है क्या वह इस बात को नहीं समझ सकेगा कि सुशीला जिन्दगी भर सुख से रहेगी और सारे घर पर राज करेगी।

रुक्मणी—यह तो ठीक है परन्तु आजकल के लड़के ऐसी बातों को नहीं देखते उनका तो यह कहना है कि जब तक लड़का और लड़की दोनों बराबर के न हों उस वक्त तक उनका विवाह न किया जाय रात को इसी बात पर बहुत देर तक मुझसे झगड़ता रहा।

म० रतनलाल-(बाहर से) "भजकलदारम् भज कलदारम् ।"

लाला ज्ञानीप्रसाद—(रुक्मणी से) महाशय जी आ गये और हमने अभी तक कुछ बिछाया ही नहीं। जाओ जल्दी से बड़ी दरी निकाल लाओ (रुक्मणी जाती है लाला ज्ञानीप्रसाद महाशय रतनलाल को आवाज़ देते हैं) आ जाइये महाराज अन्दर आ जाइये। (महाराज को देखकर) प्रणाम्।

म० रतनलाल—कहिये लाला जी क्या हो रहा है।

लाला ज्ञानीप्रसाद—जी यहां कुछ बिछाने का बन्दोबस्त कर रहा हूं।

म० रतनलाल–हां जल्दी बिछाइये समस्त पुरुष आया ही चाहते हैं।

(रुक्मणी दरी लाती है लाला ज्ञानीप्रसाद उसे बिछा देते हैं महाशय रतनलाल जी बीच में तनकर बैठते और सामने अपनी पोथी पत्रा रख लेते हैं।)

लाला ज्ञानीप्रसाद–कहिये महाराज बिरादरी के लोगों और चौधरियों से आप मिले और इस विषय पर उनके क्या विचार हैं कुछ इसका भेद लगाया।

रतनलाल–तुम इसकी ज़रा भी चिन्ता न करो ईश्वर की दया से सारे काम सफल होंगे चौधरियों को अपना बना लेना मेरे बाएं हाथ का काम है। "भज कलदारम् भज कलदारम्।"

(बाहर से) क्या लाला ज्ञानीप्रसाद जी घर में हैं।

लाला ज्ञानीप्रसाद–मालूम होता है कि बिरादरीके लोग आगये।

रतनलाल–हां वही हैं चलो उन्हें अन्दर ले आएं।

(दोनों बाहर जाते और सब लोगों को लेकर अन्दर आते हैं जब सब बैठ जाते हैं तो लाला ज्ञानीप्रसाद हाथ जोड़कर इस तरह कहते हैं।)

लाला ज्ञानीप्रसाद–आप सब भाइयों ने दास पर बड़ी कृपा की और एक दीन हीन के झोंपड़े पर पधारकर बिरादरी में इस का सन्मान और आदर बढ़ाया।

चौधरी रंगीलाल–अरे भाई कृपा कैसो बिरादरी में अमीर ग़रीब सब एक समान हैं क्यों भाई चौधरी मटरूमल जी।

चौधरी मटरूमल–निश्चय।

इतने में कन्हैयालाल भी अपने मित्रों बनवारीलाल और श्यामनाथ के साथ आजाता है।

महाशय रतनलाल जी—सभा सज्जनों आज आप सब भाइयों को इसलिये बुलाया गया है कि लाला ज्ञानीप्रसाद जी अपनी कन्या का विवाह करना चाहते हैं आप लोगों की क्या इच्छा है।

चौधरी रंगीलाल—बड़ी ही अच्छी बात है इससे बढ़कर और कौनसा खुशी का कार्य्य हो सकता है क्यों चौधरी मटरूमल जी।

चौधरी मटरूमल—वास्तव में आप सत्य कहते हैं हमारे लायक़ जो कार्य हो बतलाइये हम हर तरह की सहायता देने को तैयार हैं।

महाशय रतनलाल–इसीलिये तो समस्त भाइयों को यहां तक आने की तकलीफ़ दी गई है कि आप लोग इस शुभकार्य्य में लाला ज्ञानीप्रसाद जी का हाथ बटाएं।

कन्हैयालाल–(झल्लाकर) झूट और बिल्कुल झूट आप लोगों को इसलिये बुलाया गया है कि एक निर्दोष और नादान

कन्या का जीवन नष्ट करने और धन दौलत की देवी पर उसका बलिदान देने में मदद दें।

चौधरी रंगीलाल–इसका अर्थ ?

कन्हैयालाल–अर्थ यही कि जिस पुरुष के साथ इस ग़रीब लड़की का विवाह किया जारहा है उसकी आयू कितनी है पहले यह तो पूछिये।

म० रतनलाल–आयू कितनी है, यही कोई पचास के लगभग। "भज कलदारम् भज कलदारम्"

चौ० रंगीलाल–पचास के लगभग ?

चौ० मटरूमल–क्या कहा पचास के लगभग ?

म० रतनलाल–(चौधरी रंगीलाल से) चौधरी जी आप ज़रा इधर आकर पहले मेरी एक बात सुनलें।

बनवारीलाल–महाशय जी आपको जो कुछ कहना है वोह बीच सभा में कहिये छुप छुप कर बात करना पंचायत और बिरादरी के विरुद्ध है।

म० रतनलाल–चौधरियों के होते हुए तुम लोगों को बोलने का कोई अधिकार नहीं जो कुछ कहना हो वह लाला ज्ञानीप्रसाद जी कह सकते हैं आइए चौधरी साहब इधर आइये।

चौ० रंगीलाल–(अलग हट कर) कहिये महाशय जी ये क्या गड़बड़झाला है ?

म० रतनलाल-(सौ सौ रुपये के दो नोट देकर) ये आपकी और चौधरी मटरूमल जी की भेंट हैं बस मेरी हां में हां मिलाते रहिए यदि यह कार्य हो गया तो कुछ और भी भेंट चढ़ाया जायेगा। "भज कलदारम् भज कलदारम्।"

चौ० रंगीलाल-आप विश्वास रक्खें ऐसा ही होगा।

बनवारीलाल-(कड़क कर) मैं फिर कहता हूं कि आपको जो कुछ कहना है वह सब के सामने कहिए।

चौ० रंगीलाल-(मटरूमल की तरफ इशारा करके) क्यों चौधरी मटरूमल जी मेरी राय में तो कोई बुराई की बात नहीं यदि दूल्हा की आयू ५० के लगभग है तो होने दो देखना तो सिर्फ इस बात का है कि पुरुष का चालचलन और उसका स्वभाव कैसा है।

चौ० मटरूमल-महाशय रतनलाल जी मैं भी चौधरी रङ्गीलाल जी के राय से इत्तफ़ाक़ करता हूं सत्य है, पुरुष की आयू का देखना ही क्या।

बनवारीलाल-चाहे कन्या दो वर्ष की और पुरुष दोसौ वर्ष का हो।

चौ० रंगीलाल-यदि ऐसा ही हो तोभी हमें धर्म के नियमों में बोलने का क्या अधिकार है ?

बनवारीलाल-ये धर्म के नहीं तुम जैसे ढोंगियों और स्वार्थी पुरुषों के बनाये हुए नियम हैं।

चौ० रंगीलाल-बड़े बूढ़ों के सामने बोलते हुए तुम्हें लाज नहीं आती ।

श्यामनाथ-लाज किस बात की क्या हमने आपकी तरह इस विवाह में दो चार सौ रुपया अण्टी में रख लिया है जो लाज आए ।

चौ० रंगीलाल-'राम राम' रुपया 'कैसा रुपया' और किसने रख लिया ।

श्यामनाथ-उसने जो अभी इस पाखण्डी रतनलाल के साथ कोने में छुप छुप कर बात कर रहा था ।

चौ० रंगीलाल-इतना घोर अपराध ?

श्यामनाथ-यदि यह झूट है तो बताइये मन्दिर के लिये जितना रुपया जमा हुआ था वह सब क्या हुआ ?

चौ० रंगीलाल-हुआ क्या मन्दिर में ख़र्च हो गया ।

श्यामनाथ-और पूरा दो हज़ार रुपया, जिसका आज तक हिसाब नहीं दिया गया वह किसके पेट में गया, धिक्कार है ऐसे लोगों को जो धर्म का रुपया खाजायँ और डकार तक न लें ।

चौ० रंगीलाल-अरे मूर्खो हम जैसे धर्मात्मा पुरुष धर्म का रुपया न खाय तो क्या पाप का रुपया खायँ, क्यों चौधरी मटरूमल जी ठीक है ना ?

चौ० मटरूमल-बिलकुल ठीक है ।

म० रतनलाल-ठीक और सोलह आने ठीक भला आप जैसे धर्मात्मा लोगों को पाप के रुपयों से क्या सम्बन्ध । "भज कलदारम् भज कलदारम्"

श्यामनाथ-आप क्या इनसे कम हैं जैसे ये वैसे आप चोरों के भाई ग्रहकट ।

म० रतनलाल-(विगड़ कर) एक महाशय का ऐसा अनादर, एक ऊंचे कुल के पण्डित का ऐसा अपमान बस चुप रहो यदि ऐसे अनर्थ और कठोर शब्द मुंह से निकालोगे तो पञ्चायत में से उठा दिये जाओगे ।

श्यामनाथ-जहां धर्म और न्याय के गले पर छुरी फेरी जाय उस को पञ्चायत कहता कौन है ? यह पञ्चायत नहीं चन्द लोभी पुरुषों की सभा है जहां बैठ कर मन मानी कार्रवाइयाँ की जाती हैं ।

बनावरीलाल-महाशय जी ! पञ्चायत से उठाना तो बड़ी बात है यदि तुमने ऐसे शब्द कहे तो तुम्हारी सारी पण्डिताई का कच्चा चिठ्ठा पञ्चायत के सामने खोल कर रख दिया जायगा । क्या पण्डितों और चौधरियों के यही लक्षण होते हैं कि जाति बरबाद हो तो बला से, परन्तु अपना मतलब हाथ से न जाने पावे, आप क्या हैं और आपकी पञ्चायत क्या बला है हम आप पर और आपकी पञ्चायत दोनों पर धिक्कार करते हैं आओ कन्हैयालाल जी और श्यामनाथ चलो यहाँ से चलें और इन मूर्खों को अपनी करनी का फल चखने दें ।

(तीनों उठकर चले जाते हैं)

म० रतनलाल-न जाने आजकल के छोकरों को क्या हो गया है।

चौं० रंगीलाल-हो क्या गया है कुछ नहीं जब देश और धर्म के खण्डन का समय आता है तो लोगों के मन में ऐसे ऐसे ही विचार उत्पन्न होने लगते हैं।

चौं० मटरूमल-बिलकुल सत्य है।

म० रतनलाल-अच्छा यह बात बताइये कि विवाह के बारे में आप लोगों की क्या राय है ?

चौं० रंगीलाल-हम चौधरियों का यह कहना है कि धर्म और शास्त्र ऐसे विवाह की आज्ञा देता है, इसलिये आप बेखटके सुशीला का विवाह कर सकते हैं [रतनलाल से] आपने जो बात कही थी ज़रा उसका भी ध्यान रखियेगा।

म० रतनलाल-मुझे याद है, हां तो सुशीला का विवाह कर दिया जाय ?

चौं० रंगीलाल-अवश्य कर दिया जाय [ला० ज्ञानीप्रसाद से] लाला साहब आप इन छोकरों के कहने की चिन्ता न करें जब बिरादरी के चौधरियों ने कह दिया तो फिर कौन रोक सकता है ?

लाला ज्ञानीप्रसाद-जो आज्ञा, यदि यह कार्य हो गया तो मैं अपनी तरफ़ से दो सौ रुपये मन्दिर के लिये दान दूंगा।

चौधरी रंगीलाल–आप ईश्वर का नाम लेकर कन्या का विवाह रचाइये रुकावट डालने वालों को हम देख लेंगे अच्छा अब तो आज्ञा है ना ?

लाला ज्ञानीप्रसाद–जैसी पञ्चों की इच्छा ।

[सब लोग अपने अपने घरों को जाते हैं लाला ज्ञानीप्रसाद खुशी खुशी दरी और चादर उठा कर घर में लेजाते हैं]

अङ्क २ दृश्य ६

बाज़ार

(राजा शतानीक का सेनापति अपनी स्त्रीके भयसे सती चन्दनबाला को बाज़ार में बेचने लाता है एक वेश्या उसे ख़रीदकर अपने घर ले जाना चाहती है चन्दनबाला जाने से इनकार करती है। वेश्या उसे लेजाने का यत्न करती है। चंदनबाला की निराशा देखकर आकाश से देवता प्रगट होते और बंदरों की एक फ़ौज वहां भेज देते हैं वेश्या और समस्त डरकर भाग जाते हैं सेनापति आश्चर्य में आता है।

चन्दनबाला—(सेनापति से) क्यों तुम उदास क्यों हो और मुझे बाज़ार में किस कारण लाए हो साफ़ साफ़ बताओ।

सेनापति—ग़रीब पुत्री मैंने तो बहुत चाहा कि पुत्री के समान तेरी रक्षा करूं और किसी ऊंचे और अच्छे कुल के क्षत्री के साथ तेरा विवाह करदूं परन्तु क्या करूं मेरी स्त्री बड़ी खोटी है वह एक घड़ी भी तुझे अपने घर में रखना नहीं चाहती उस को हट है कि तुझे बाज़ार में किसी के हाथ बेच दिया जाय।

चंदनबाला—तो क्या तुम मुझे बेचोगे?

सेनापति—अवश्य मुझे ऐसा नीच और अधर्म काम करना ही पड़ेगा।

चंदनबाला—कारण ?

सेनापति—कारण यही कि यदि मैं ऐसा न करूंगा तो वह राजा से जाकर कह देगी उस समय मेरी क्या दुर्दशा होगी] और मुझे क्या दण्ड भोगना होगा इसे तुम अच्छी तरह समझ सकती हो।

चंदनबाला—तो क्या तुम स्त्रीके कहने से मुझ निर्दोष अभागिनि पर ऐसा अत्याचार करोगे।

सेनापति—मजबूरी।

चंदनबाला—मेरा अपराध ?

सेनापति—कुछ नहीं केवल कर्म की गति।

चंदनबाला—(शान्ति स्वभाव से) कर्म को गति, हां तुम ठीक कहते हो, आहा ! कर्म की गति भी कैसी विचित्र होती है कि आज उसी के फेर में पड़कर एक ऊंचे कुल की राजकुमारी जिसके माता पिता दोनों निर्दोष मारे गये भरे बाज़ार में दासियों के समान बिकने को आई है वह जो कल तक राज भवन में पली जिसने हज़ारों क्या लाखों करोड़ों पुरुषों पर राज किया आज से दूसरों की सेवा करके अपना जीवन बितायेगी।

गायन ।

कहूं व्यथा किसी से कि भाग ने, मुझे किस बलामें फंसा दिया ।
न हो दूर जो कभी जीते जी मेरे रोग ऐसा लगा दिया ॥
मेरा यह खता कि हूं बेखता इसी जुर्म की ये मिली सजा ।
कि समझ के तुच्छ मुझे खाक में मेरे दुश्मनों ने मिला दिया ॥
कभी ऊंचे ऊंचे मकान हैं कभी टूटी फूटी सी झोंपड़ी ।
कभी चैन है कभी कष्ट है ये स्वांग मुझको दिखा दिया ॥
कभी शान्ति की थी प्रतिमा मगर अब छवि हूं विलाप की ।
मेरे मुख पे मुखका जो तेज था वह दुःखोंने आह ! मिटा दिया॥
न तो मात है न पिता मेरे न कोई संगाती न साथी है ।
न जगत में जिसका हो कोई भी, मुझे सबने ऐसा बना दिया ॥
मैं बड़े वियोग की आह हूं मैं बड़े दुखों की पुकार हूं ।
मैं हूं वो कि जिसके शराप ने ये जहान सारा हिला दिया ॥
जिसे सांस समझे हैं 'नाज़' सब ये धुएं की एक लकीर है ।
मेरे मन में ग़म की जो आग है मेरे तन को उसने जला दिया ॥

गाने के बाद दुखियारी चंदनबाला सड़क के किनारे पर शीस झुकाकर बैठ जाती है कुछ वेश्याएं उसको खरीदने के विचार से बातें करती हुई आती हैं ।

कामनीबाई—जमनाबाई ।

जमना—हां कामनी बाई ।

कामनी—क्या ये सत्य है कि आज एक अत्यन्त रूपवती रमणी बाज़ार में बिकने को आई है।

जमना–सुना तो ऐसा ही है और इसीलिये मैं यहां आई हूं कि यदि खरीदने की शक्ति नहीं है तो न सही उसके दर्शन तो करलूं।

कामनी—वाह शक्ति की भी अच्छी कही आज कौशाम्बी नगरी तो क्या दूर दूर की वेश्याएं धन और दौलत में तुम्हारी बराबरी नहीं कर सकीं भला तुम्हारे होते हुए दूसरा क्या मोल लगा सक्ता है।

जमना–क्यों नहीं मैं ऐसी ही संसार में सबसे बड़ी धनवान हूं ?

कामनी—ऐ तो चिढ़ती क्यों हो चलो यूं सही तुम धनवान नहीं कंगाल हो।

जमना–'कंगाल हों मेरे वैरी' मेरे बुरा चाहने वाले वाह कामिनी बाई तुम तो बातों ही बातों में कोसने लगीं।

कामनी—ऐ वाह तुम्हारी तो वही कहावत है कि 'चित्त भी मेरी पट्ट भी मेरी' धनवान कहो तो चिढ़ाना हो गया कंगाल कहो तो कोसना ठहरा फिर बताओ कि तुम्हें क्या कहें ?

सुन्दर–(हाथ मटकाकर) मैं बताऊं।

जमना–हां हां तुम भी अपने मन कीसी कह दो ना ?

सुन्दर–(हंसकर) इन्हें थाली का बैंगन कहा करो कि जिधर जी चाहा उधर ही को लुढ़क गईं।

[ये सुनकर सारी वेश्याएं हंस पड़ीं इतने में सुन्दर की नज़र चन्दनबाला पर पड़ी तो वो उसके तेज और मुखड़ेकी शोभा देखकर भौंचक्का सी हो गई और साथ वालियों से इस तरह बोली]

सुन्दर–(साथ वालियों से) कुछ देखा ?

कामनी —क्या ?

सुन्दर–उधर देखो वो क्या है।

कामनी–(चन्दन बाला को देखकर) आश्चर्य और महान् आश्चर्य ये स्त्री है या सचमुच स्वर्ग से कोई अप्सरा संसार में अपना चमत्कार फैलाने आई है।

जमना–ओ हो! ऐसा तेज इतना रूप।

सुन्दर–इसकी आंखें हिरनी की आंखों को लज्जित किये देती हैं।

कामनी–इसके होंटों की लाली मूंगे की लाली को शरमा रही है।

जमना–उसके सुन्दर सुडौल कंठ की उपमा निर्जीव शंख से कैसे दी जा सकती है।

सुन्दर–चन्द्रमा तो इसके रूप की क्या बराबरी करेगा यदि सूर्य महाराज भी सामने आएं तो मुंह की खाएं।

जमना–कहती तो ठीक हो परन्तु देखें ये अनमोल रत्न कौन खरीदता है।

कामनी–ऐसी अनूपम सुन्दरी भरे बाज़ार में बिकने को आए और ख़रीदारों का टोटा रहे ऐसा कभी नहीं हो सक़ता।

सुन्दर-खुली हुई बात है कि जो सब से ज्यादा मोल लगायेगा वही इसको पायगा।

जमना-(सेनापति से) इस स्त्री का क्या मोल है?

सेनापति-अभी तक इसका मोल दो सौ अशर्फियां लग चुका है

जमना-तुम इसे कितने दामों तक बेचोगे।

सेनापति-मैं पांच सौ अशर्फियों से एक कौड़ी कम न लूंगा।

सुन्दर-ये तो ज्यादा मोल है।

कामनी-हमारी शक्ति नहीं जो इतना मोल दे सकें।

जमना-(कुछ सोच कर) अच्छा मैं तय्यार हूं।

[जमना यह कह कर पांच सौ अशर्फियां सेनापति को गिन देती है सेनापति अशर्फियां लेने के बाद चन्दनबाला का हाथ जमना वेश्या के हाथ में देकर कहता है]

सेनापति-जाओ पुत्री इसके साथ जाओ ये तुम्हें बड़े सुखसे रखेगी।

चंदनबाला-(जमना से) बहिन तुम्हारा नाम क्या है?

जमना-मेरा नाम जमना है।

चन्दनबाला-तुम किस कुल से हो ब्राह्मणी हो, क्षत्राणी हो अथवा कौन हो?

जमना-तुझे मेरे कुल से क्या मतलब?

चन्दनबाला-मुझे मतलब हो या न हो परन्तु तुम्हें बताने से क्यों इनकार है।

जमना-(ज़रा गरम हो कर) मैं ऐसे कुल से हूं कि बड़े बड़े क्षत्री पुरुष और ब्राह्मण कुल के मनुष्य मेरे आगे हाथ जोड़ते और मेरे चरणों पर शीस नवाते हैं।

दास हैं मेरे सभी निर्बल, कि वह बलवान हैं।
रात दिन सेवा मेरी करते हैं जो धनवान हैं॥
कह दिया जो कुछ भी मैंने मुखसे वह तलवार है।
वीरता वीरों की मेरे सामने बेकार है॥

चंदनवाला-तुम धन्दा कौनसा करती हो।

जमना-मैं कौन हूं और क्या धन्दा करती हूं इन बातों को पूछने की तुझे क्या पड़ी है यदि बिना इन बातों के जाने हुए तुझे कल नहीं पड़ती तो सुन मेरे घर तुझे अच्छे अच्छे बहुमूल्य गहने और रेशम के वस्त्र पहिनने को मिलेंगे राज-कुमारियों को भी जो दुर्लभ हैं वो उत्तम और बढ़िया भोजन खाने को मिलेंगे ऐरी भोली भाली कन्या मेरे घर रह कर तू राजभवन के सुखों को भूल जायगी बड़े बड़े धनवान, बलवान और ऊंचे कुल के महापुरुष तेरी आंखों के इशारे पर अपना तन, मन, धन सब कुछ तुझ पर अर्पण करने को तय्यार हो जाएंगे संसार की बढ़िया से बढ़िया वस्तु तेरे चरणों में होगी और तेरा जीवन सुख-सागर में तैरता फिरेगा, एक स्त्री को संसार में इतने सुख मिलें इससे बढ़ कर और क्या इसका सौभाग्य हो सक्ता है।

यहां के दुख में भी आनन्द के पहलू निकलते हैं।
ये वह दुनियां हैं जिसमें सुख के फ़व्वारे उछलते हैं॥
नहीं जो रानियों के भाग में वह चैन पाओगी।
भविष्य को देखकर पिछले समय को भूल जाओगी॥

चंदनबाला--तुम्हारी इन लच्छेदार बातों से तो साफ साफ प्रगट होता है कि तुम वेश्या हो।

जमना--वेश्या ही सही परन्तु इस समय में तेरी स्वामिनी हूं, इस कारण तुझे मेरी आज्ञा माननी होगी।

चंदनबाला--कभी नहीं तुम्हारे घर जाने की अपेक्षा तो मरजाना ही अच्छा है तुम्हें कुलीन स्त्रियों की लज्जा का मूल्य नहीं मालूम, तुम्हारा अन्तःकरण पशुओं से भी नीच है तुम पुरुषों को अपने झूंटे रूप और कामदेव के फन्दे में फँसा कर अधम मार्ग में लेजाती हो आप वर्बाद होती हो और उन्हें भी वर्बाद करती हो।

धिक्कार धन दौलत पै है, धिक्कार हैं आराम पर।
आकाश से बिजली गिरे इस नीच पापी काम पर॥
काटे हजारों के गले, तुमने कपट के वार से।
अच्छा हो मिटजाये तुम्हारा, वंश तक संसार से॥

जमना--अपना कोसना काटना रहने दे और सीधी तरह मेरे साथ घर चल।

चंदनबाला--मैं इस अधर्म के मार्ग पर पांव भी न रक्खूंगी।

जमना–तो क्या तू मेरे साथ नहीं जायगी ?

चंदनबाला–नहीं, नहीं, जीवन के अन्त तक नहीं ।

जमना–ओहो इतना अभिमान इतना घमण्ड ?

चंदनबाला–निश्चय–

ये भूल है जो समझती हो आन देदूंगी ।
बड़ों की आबरू, लाज, और शान देदूंगी ॥
करूंगी धर्म की रक्षा प्रान् देदूंगी ।
सतीत्व के लिये मैं अपनी जान देदूंगी ॥
न डर न फ़िक्र न चिन्ता न ख़ौफ़ मन में है ।
सती का दूध, लहू क्षत्री का तन में है ॥

जमना–यह बात है ?

चंदनबाला–हां हां, पापन चाण्डालनी यही बात है ।

जमना–अच्छा मैं भी तो देखूं तू किस तरह नहीं जाती है ।

[इतना कह कर जमना झपट कर चन्दनबाला की कलाई पकड़ती और उसे घसीटकर लेजाना चाहती है चन्दनबाला भूखी शेरनी की तरह क्रोधित होकर उसे धक्का देती और निराश होकर इस तरह कहती है]

चंदनबाला–ओ नीच अधर्मी निर्लज्ज वेश्या अपने अपवित्र हाथ एक सती के शरीर को न लगा [मनुष्यों की तरफ़ देखकर] सब निर्लज्ज हो गये, सब कायर हो गये, क्या इतनों में एक

पुरुष भी ऐसा नहीं जो एक निर्दोषा सती स्त्री के धर्म और सतीत्व की रक्षा कर सके, अच्छी बात है यूं है तो यूं ही सही जाओ दुपट्टा ओढ़कर और चूड़ियां पहिन कर घरों में बैठ जाओ एक सच्ची क्षत्राणी को तुम जैसे कायर और निर्लज्ज पुरुषों की सहायता की आवश्यकता नहीं उसकी रक्षा करने के लिये स्वर्ग से देवता आएंगे, आओ आओ संसार में "अहिंसा परमोधर्म:" की शोभा बढ़ाने वाले जिन भगवान अपनी दासी की सहायता के लिये आओ ।

दया हो मुझपै दयालू दया की भूखी हूं ।
बचाओ लाज कि भगवन् तुम्हारी दासी हूं ॥
अनाथ जान के ऐ नाथ! सब सताते हैं ।
सतीत्व की मेरे, पापी हँसी उड़ाते हैं ॥

[चन्दनबाला के मुंह से इन शब्दों का निकलना था कि चारों तरफ़ से सैकड़ों बड़े २ बन्दर प्रगट होकर वैश्याओं और पुरुषों की तरफ़ दौड़ते हैं बाज़ार के समस्त लोग यह हाल देखकर भागते हैं सेनापति भी भय के मारे औंधे मुंह ज़मीन पर गिर पड़ता है सती चन्दनबाला देवताओं का यह उपकार देखकर धरती पर घुटने टेक देती और हाथ बांधकर जिन भगवान् की प्रार्थना करती है ।]

दूसरा अङ्क समाप्त ।

अङ्क ३ दृश्य १

रास्ता ।

[धनवाहा नामी सेठ चन्दनवाला को ख़रीदकर अपने मकान को ले जा रहा है]

गाना ।

चंदनवाला—

भोगूंगी कष्ट कब तक कब तक सितम सहूंगी ।
दासी तो बन चुकी हूं अब और क्या बनूंगी ॥
अपनों से हाय बिछुड़ी माता पिता से छूटी ।
विपता पड़ी यह कैसी क्योंकर भला जिऊंगी ॥
बिगड़ी हुई हवा हूं टूटा हुआ दिया हूं ।
निर्दोष बालिका हूं कब तक युंही रहूंगी ॥
आकाश मेरा वैरी धरती लहू को प्यासी ।
है भाग से लड़ाई किस किस से युद्ध करूंगी ॥
दुःख हों कि आफ़तें हों, व्यर्थ हैं ये जीना ।
जीवन रहे कि जाये मैं धर्म पर चलूंगी ॥

धन्य है भगवान् धन्य है, आहा! तुम्हारी लीला भी कैसी न्यारी है बचा लिया तुमने अपनी अनाथ दासी को एक पापिन और दुष्ट वेश्या के फन्दे से बचा लिया अब देखें भ-

विष्य क्या दिखाता है ? और इस पुरुष के हाथों से मुझे दुःख भोगना पड़ता है या सुख ?

सेठ धनवाहा—पुत्री चिन्ता न करो मेरे घर तुम्हें ऐसे काम करने पड़ेंगे जिनसे तुम्हारे धर्म आचरण में किसी तरह की वाधा न पड़ेगी ।

चंदनवाला—क्या मैं आपसे कुछ पूछ सकती हूं ?

सेठ धनवाहा—हां, हां वड़ी ख़ुशी से ।

चंदनवाला—आपके घर में किस तरह का धर्म और आचार प्रचलित है ?

सेठ धनवाहा—भद्रे ! मेरे कुल में परम्परा से यह रिवाज चला आता है कि घर के सभी लोग जिन देव की पूजा करते हैं। साधुओं की सेवा-भक्ति की जाती है, धर्म कथाएं सुनना और जीव दया का पालन करना जीवन का सवसे वड़ा कर्त्तव्य समझा जाता है ।

चन्दनवाला—और कुछ वताइये ?

सेठ धनवाहा—और यही कि मेरे यहां सदा से नवकार मंत्र का ध्यान किया जाता है, यही हम लोगों का कुलाचार है । पुत्री मेरे घर में रहते समय तुम्हारे धर्म कार्य में कभी किसी प्रकार की रुकावट नहीं पड़ेगी ।

न तप करने से रोकेगा न कोई दान करने से ।
सदा सुख पाओगी भगवान् 'जिन'का ध्यान करनेसे॥

अगर संसार से घृणा है तुमको, ध्यान में रहना।
हमेशा तुम दया धर्म, और उसके ज्ञान में रहना ॥

चंदनबाला–(सेठ के चरणों में शीष नवाकर) आप के ढाढस बँधानेवाले शब्दों से मेरे मन को बड़ा आनन्द प्राप्त हुआ। मेरे हृदय में हर्ष की धार प्रवाहित हो चली, मुझे आशा हो गई कि सारी चिन्ताएं मिट गईं और अब भविष्य में अपना जीवन सुख से बिता सकूंगी।

दुःख के बन्धन से छूटी सुख का सहारा पा गई।
क्यों न फिर से जी उठूं अमृत की धारा पा गई ॥
मिट गईं शङ्काएं सारी शीलरक्षक मिल गया।
दो ही झोकों से हवा के सारा हृदय खिल गया ॥

गायन।

मुसीबत की घड़ी गुज़री समय आनन्द का आया।
बुराई के एवज़ नेकी ने मुखड़ा अपना दिखलाया ॥
मिले दुःख दर्द के साथी मिटी चिन्ता जो मनमें थी।
उठाये कष्ट लाखों तब कहीं सन्तोष कुछ पाया ॥
खुशी के मारे उन आंखों में आंसू क्यों न भर आये ?
कि जिनसे हमने वर्षोंतक लहू दिल का है टपकाया ॥
नहीं रहती जगत की एक सी हालत नहीं रहती।
कभी है धूप की सख्ती कभी ठण्डक कभी साया ॥
शक्ति चलने की जब बाक़ी रही कुछ भी न पैरों में।
ठिकाना बैठने का तब कहीं ऐ "नाज़" यह पाया ॥

[जाना]

अङ्क ३ दृश्य २

सेठ धनवाहा का मकान

(सेठ धनवाहा की स्त्री जिसका नाम मूला है
अपने पति के इन्तज़ार में दिखाई देती है।)

मूला-(दासी से) पहर भर से ज्यादा दिन चढ़ गया रसोई ठंडी हो रही है परन्तु आज स्वामी जी अभी तक बाज़ार से नहीं आए आखिर इतनी देर क्यों हुई ?

दासी—बाई जी धनज व्योपार में देर सवेर होती ही रहती है।

मूला-यह ठीक है परन्तु आज प्रातःकाल ही से मेरी सीधी आंख फड़क रही है न जाने क्या होने वाला है ?

दासी—आप चिन्ता न करें सब अच्छा ही होगा, ए लो ! वोह सेठ जी आगये किन्तु इनके संग में यह कौन है ?

मूला-(आश्चर्य के साथ) कौन ?

दासी—एक अत्यन्त रूपवती स्त्री।

मूला-(चौंककर) क्या कहा एक सुन्दर स्त्री ?

दासी—हां।

[सेठ धनवाहा चंदनबाला को लेकर आता है]

सेठ धनवाहा—प्रिये !

मूला-स्वामी जी।

सेठ धनवाहा—देखो यह एक कुलीन कन्या है जो विपत्ति में पड़कर आज बाज़ार में बेच डाली गई।

मूला–यहां कैसे आई ?

सेठ धनवाहा—मैं इसे तुम्हारी दासी बनाने के लिये ख़रीद लाया हूं।

मूला–यह कैसे मालूम हुआ कि इसका कुल अच्छा है या बुरा ?

सेठ धनवाहा—देखती नहीं हो कि इसके चेहरे पर कुलीनता के चिह्न अङ्कित हैं यदि लोगों का कहना सत्य है कि मनुष्य के गुण अवगुण की पहिचान उसके चेहरे मोहरे से हो जाती है तो इस लड़की के चेहरे से साफ़ साफ़ प्रगट हो रहा है ये एक गुणवती कन्या है मैं इसलिये इसे ख़रीद लाया हूं कि तुम दोनों को एक साथ रहने सहनेसे बहुत कुछ लाभ होगा।

मूला–होगा और अवश्य होगा मैं भी ऐसा ही विचार करती हूं कि यह कन्या ज़रूर किसी बड़े कुल की कन्या है।

सेठ धनवाहा—हां हां ऐसा ही है, इस समय यह लड़की बड़ी व्याकुल है इस कारण इसके पालन पोषण से अपने को बड़ा पुण्य होगा।

मूला–(खिसियानी होकर) बड़ा हो भारी पुण्य।

सेठ धनवाहा—प्रिये अपने घर में धन दौलत बहुत कुछ है किसी वस्तु की कमी नहीं इसलिये यह लड़की यदि कुछ दान पुण्य करना चाहे तो खुशीसे करने देना रोकना टोकना नहीं।

मूला–जो आपकी आज्ञा।

सेठ धनवाहा —(चन्दनबाला से) आओ पुत्री मैं तुम्हारे रहने का ठिकाना तुम्हें बता दूं।

[सेठ धनवाहा चंदनबाला को घर के अंदर ले जाता है]

मूला–दासी!

दासी—हां सेठानी जी।

मूला–कुछ समझी?

दासी—कुछ भी नहीं।

मूला–सेठ जी इस स्त्री को क्यों लाए हैं?

दासी—आपकी दासी बनानेके लिये लाए हैं और क्यों लाए हैं।

मूला-(शिर हिलाकर) ऊं, हूं, यह बात नहीं है।

दासी—फिर किसलिए लाये हैं?

मूला–अपनी स्त्री, मेरी सौत और तेरी स्वामिनी बनाने के लिये।

दासी—छिः छिः सेठानी जी यह आप कैसी बातें करती हैं भला सेठ जी जैसा धर्मात्मा और ज्ञानी मनुष्य कहीं ऐसा घोर पाप कर सका है।

मूला–एक सुन्दर स्त्री के रूप में इतनी शक्ति होती है कि वह बड़े से बड़े महापुरुष और धर्मात्मा मनुष्य को प्रेम के जाल में फंसा लेती हैं तू ने इतना विचार नहीं किया कि ऐसी परम सुन्दरी रमणी कहीं दासी होने के योग्य हो सकती है?

दासी —यह तो ठीक है परन्तु सेठ जी कहते थे कि बेचारी विपता में पड़कर बाज़ार में बिकने को आई थी।

मूला-अर्थात् ।

दासी-अर्थात् यही कि किसी अच्छे कुल की कन्या जानकर सेठ जी को इस पर दया आ गई और वह इस दुखियारी को ख़रीद लाये ।

मूला-ख़रीद लाने का कारण ?

दासी-एक निर्दोष अबला स्त्री की सहायता धर्म और दया का पालन ।

मूला-नहीं यह सब मर्दोंकी चाल हैं अरी मूर्ख जिनका मन मलीन होता है वह इसी प्रकार लोग दिखावे के लिए परस्त्रियों को बहिन बेटी के समान सम्बोधन किया करते हैं इतना तो सोच कि अब मैं बूढ़ी हो गई और ये जवान और ख़ूबसूरत भला ऐसी स्त्री के होते हुए सेठ को मेरी क्या परवाह होगी ? हाय, हाय, क्या इस बुढ़ापे में मुझ अभागिनि को सौत का दुःख उठाना पड़ेगा ?

दासी-सेठानी जी यह आपका विचार ही विचार है।

मूला-विचार नहीं मैं जो कुछ कह रही हूं बिल्कुल ठीक और सत्य कह रही हूं ।

दासी-आज सारी कौशाम्बी नगरी में हमारे सेठ जी से बढ़कर कोई मनुष्य अपने धर्म का पालन करने वाला नहीं जिस

प्रकार सूर्य चमत्कार फैलाने के बदले संसार में अन्धकार पैदा नहीं कर सकता उसीप्रकार जो पुरुष दयावान है सेवा धर्म जिसका जीवन है और जो अन्य स्त्री को अपनी पुत्री और बहिन के समान समझता है उस पर ऐसा कठोर संदेह करना चन्द्रमा को कलंक लगाना है।

फूल सुख देने के बदले कष्ट दे सकता नहीं।
बूंद अमृत का मनुष्य की जान ले सक्ता नहीं॥
धर्म की शक्ति मिटा देती है कसबल पाप का।
काम कब करते हैं बुद्धिमान पश्चाताप का॥

मूला—तू कल की छोकरी इन बातों को क्या समझे मैंने ये बाल धूप में सफेद नहीं किये हैं मैं मनुष्य की आंखों से उसके मन का छुपा हुआ भेद ताड़ जाती हूं सेठ के मीठे मीठे शब्दों और उसकी प्रेम भरी दृष्टी से साफ प्रगट होता है कि वह इस कन्या को अपनी स्त्री बनाना चाहता है।

दासी—यदि ऐसा ही होता तो सेठ जी को छुपाने की क्या आवश्यकता है?

मूला—क्यों, आवश्यक्ता क्यों नहीं थी यदि इसे यह यूंही घर में डाल लेता तो लोग तरह तरह की बात बनाते इसी लिये तो यह इसे दासी के बहाने से लाया है अच्छी बात है मेरा नाम भी मूला नहीं जो मैंने इसे जड़ मूल ही से न उखाड़ फैंका हो!

दासी–अगर आपका विचार ठीक है तो अभी से उसका उपाय क्यों न किया जाय ।

मूला–अभी सेठ के नेत्रों पर इस सुन्दरी के रूप का जादू चढ़ा हुआ है इसकी सुन्दरता के सागर में उसका मन डूबा हुआ है अब तो अवसर पाकर ही कांटे को रस्ते से दूर करना होगा अच्छा तो बता तू इस काम में मेरा साथ देगी या सेठ का ?

दासी–सेठानी जी मेरे लिये सेठ जी और आप दोनों बराबर हैं मेरा कर्तव्य यह है कि मैं ऐसा काम करूं जिससे दोनों को लाभ पहुंचे ।

मूला–यह ठीक है परन्तु क्या दासियों और चाकरों का यह कर्तव्य नहीं कि वह अपने स्वामी को नुक़सान और बुराइयों से बचायँ ।

दासी–है और अवश्य है ।

मूला–तो बस तुझे भी इस समय मेरा साथ देना चाहिये क्यों कि हम दोनों मिल कर सेठ को एक घोर पाप और बुराई से बचाने का यत्न कर रहीं हैं, यह काम सेठ जी की निगाहों में चाहे कितना ही बुरा क्यों न हो किन्तु समाज और धर्म्म के नज़दीक किसी हालत में भी बुरा नहीं हो सक्ता ।

दासी–मैं इस काम में आपको सहायता करने को तय्यार हूं ।

परन्तु यह तो बताइये कि पति और पत्नी के मामले में दासी को बोलने का क्या अधिकार है ?

मूला–है, और बहुत बड़ा अधिकार है ।

दासी–अच्छा यह तो बताइये मुझे क्या करना होगा ?

मूला–समय आने पर मैं बतादूंगी अभी केवल इतना ही काम है कि तू उसकी सारी बातों को छुप छुप कर देखती रहना और जो बात नई देखे उसी वक्त मुझसे कह देना अब अन्दर जाकर अपना काम कर।

दासी–जो आज्ञा ।

(इतना कह कर दासी अन्दर जाती है)

मूला–इस ढलती हुई उम्र में सेठ जी की मति मारी गई है जो मेरे मौजूद होते हुए दूसरी स्त्री को घर में लाया हैं परन्तु उसे यह नहीं मालूम कि मनुष्य तो क्या स्त्रियों से देवता और राक्षस भी नहीं जीत सकते भला ऐसी कौन मूर्ख स्त्री होगी जो अपने हाथों अपने घर में विष का बीज बोएगी। बस आज से मेरा यही काम होगा कि चुपके चुपके इसकी बुराइयां और ऐब ढूंढती रहूं और मौका पाकर इसे घर से निकाल दूं। मेरे जीते जी यह इस घर की स्वामिनी बने यह अनहोनी बात कभी नहीं हो सक्ती।

है ये कहना बे असर, ये फूल हैं ये घास है।
वो कहां मिट्टी में, कस्तूरी में जो बू बास है॥

जानते हैं सब कि यह, सन्देह यह विश्वास है।
हैं स्वामी, फिर स्वामी, दास आख़िर दास है॥
पांव की जूती कभी भी, सर पै चढ़ सकती नहीं।
हां दिये की रोशनी, सूरज से बढ़ सकती नहीं॥

(जाना)

अङ्क ३ दृश्य ३

जङ्गल

भगवान महावीर एक पहाड़ के नीचे ध्यान कर रहे हैं उनके पास कुछ उदासीन श्रावक बैठे हुए संसारी मनुष्यों की अवस्था पर बातचीत करते हैं भगवान ध्यान से निश्चिन्त होकर उन श्रावकों को सच्चा और सही उपदेश देते हैं और उनके वहां से चलेजाने के बाद आहार ग्रहण करने की बड़ी कठिन प्रतिज्ञा करते हैं।

श्रावक नं० १—आज इस समस्त संसार में ऐसा कोई मनुष्य दिखाई नहीं देता जो धर्म और शास्त्र के अनुसार दानी कहलाने योग्य हो, यूं तो हज़ारों क्या लाखों पुरुष ग़रीब हों अथवा धनवान प्रतिदिन कुछ न कुछ दान करते ही रहते हैं परन्तु वे उससे लाभ उठाने की भी अवश्य आशा रखते हैं कोई समाज में वाह वाह होने के ख्याल से दान देता है तो

किसी के मन में ये विचार होता है कि इस दान से प्रसन्न होकर देवता हमारे बिगड़े हुए कार्य के बनाने में सहायता करेंगे ।

श्रावक नं० २–एक दान ही क्या धर्म्म का कोई कार्य ऐसा नहीं जिसे आज कल के मनुष्य बिना किसी लोभ के करते हों ।

श्रावक नं० ३–करने दो उन्हें लोभ ही की आशा से करने दो ।

श्रावक नं० १–कारण ?

श्रावक नं० ३–कारण यही कि वह कुछ न कुछ करते ना हैं । रोना तो उनका है जो कुछ करने के बदले उलटा धर्म्म और उसके नियमों का ठट्ठा उड़ाते उनके पालन करने वालों को सिड़ी-पागल और साधु-सन्तों को पाखण्डी बताते हैं ।

श्रावक नं० १–चुप रहो भाइयो चुप रहो वह देखो भगवान महावीर स्वामी ध्यान कर चुके । आओ उनके पवित्र चरणों में बैठ कर कुछ धर्म्म और ज्ञान की शिक्षा लें जिससे हमारा जीवन सुफल हो ।

[सब भगवान के सामने जाकर एक स्वर से कहते हैं]

चारों श्रावक–हे त्रिलोकी नाथ दीनबन्धु प्रणाम् ।

भगवान्–आओ धर्म के सेवको आओ, (श्रावकों के यथास्थान बैठने पर) हे भव्य जीवो, संसार में जितने भी प्राणी हैं वह सुख चाहते हैं और दुःख से डरते हैं किन्तु लाख प्रयत्न करने पर भी सुख प्राप्त नहीं होता, सुख रूपी रत्न ढूंढ़ने में

यह जीव संसार रूपी समुद्र में गोते लगा रहा है किन्तु सफलता नहीं मिलती।

श्रावक नं० १ भगवन् अपराध क्षमा हो, यह बात तो समझ में नहीं आई कि संसार में किसी को भी सुख प्राप्त नहीं होता, दूर की बात तो क्या कहूं, हमारे ही शहर में कितने ही ऐसे धनी हैं जो रत्न जड़ित जूते पहिनते हैं दूध से कुल्ला करते हैं। सांसारिक सभी वस्तुओं का सानन्द उपयोग करते हैं, दुःख है क्या बला वह यह भी नहीं जानते।

भगवान्–इच्छानुसार सांसारिक वस्तुओं के प्राप्त हो जाने में ही सुख मान लिया है, यह बड़ी भारी भूल है, संसारकी प्रत्येक वस्तु नाशवान है जो आज प्राप्त हुई है कल वह नष्ट हो जाती है धन दौलत राजपाट सब कुछ आंखों देखते छुट जाते हैं माता, पिता, स्त्री, पुत्र, भाई बान्धव यह सब जीते जी के साथी हैं समय पड़ने पर कोई काम नहीं आता, यहां तक कि अंधेरी रात में इस शरीर की परछाई भी अलग हो जाती है, अन्य की तो बात ही क्या?

श्रावक नं० २ फिर भगवन् सच्चा सुख कौनसा है, और वह क्योंकर प्राप्त हो सकता है?

भगवान्–जीवन मरण के झगड़े से छुटने का नाम ही सच्चा सुख है, और वह सुख मोक्ष प्राप्त होने पर हो सकता है।

श्रावक–और मोक्ष में विशेष गुण क्या हैं?

भगवान्–इस जीव को आकुलता जिसका दूसरा नाम चिन्ता है इस संसार में वेधे डालती है चिता तो मुर्दे को जलाती है किन्तु चिन्ता जीते जी जीवों को जलाती है कांटे की तरह हृदय में चुभती रहती है, जहां आकुलता नहीं दूसरे शब्दों में यह कहना चाहिये कि चिन्ता नहीं, वहां सच्चा सुख है, आत्मा का इसी में भला है, आकुलतारहित पनाही मोक्ष का विशेष गुण है।

श्रावक नं० ४–हे त्रिलोकीनाथ, दीनबन्धु, यह आनन्दस्वरूप मोक्ष क्योंकर प्राप्त हो सक्ती है।

भगवान्–अपना कर्तव्य पालने से।

श्रावक नं० १–हमारे क्या कर्तव्य हैं ?

भगवान्–प्राणीमात्र का कल्याण चाहो विश्वभर से प्रेम करो, धर्म की; समाज की और हरएक प्राणी की सेवा करो।

श्रावक नं० २- दीनदयालू! स्त्री पुत्र सब मतलब के हैं इन से प्रेम करने में ही जीव का भला नहीं, अनेक गतियों में भ्रमण करना पड़ता है, फिर संसारभर से प्रेम करना तो सरासर अपने को नर्क में गेरना है।

भगवान्–अहा! स्त्री, पुत्र से यह समझ कर प्रेम करना कि यह मेरे हैं, यह बुरा है। किन्तु जो निःस्वार्थ सेवाभाव से प्रेम किया जाय वह श्रेष्ठ है। क्योंकि जो विश्व प्रेमी है जिसको सभी अपने प्राणों से अधिक प्यारे हैं वह किसी के साथ

बुराई का बर्ताव नहीं करता, उसकी दृष्टि में क्या चींटी क्या हाथी सभी एक समान हैं, जिसका हृदय प्रेम से सराबोर है उससे जंगल के भयानक जानवर भी नहीं डरते, यही कारण है कि साधु मुनिराजों का बनों में निवास रहता है, वहां शेर रीछ सभी उनके पास प्रेम से आते हैं।

श्रावक नं० ३–तो भगवन ऐसा करने से हमें मोक्ष प्राप्त हो जायगी ?

भगवान्–अवश्य, पहिले अपने को विश्वप्रेमी बनाओ फिर श्रावक के बारह व्रत पालन कर लेने के पश्चात जैनेश्वरी दीक्षा धारण करके मोक्ष प्राप्ति के लिये १२ भावनाओं का चिंतवन करते हुए पञ्च महावृत समिति द्वादश तप का अर्थात् साधु के समस्त मूल गुणों का पालन करे। इस प्रकार सकल चारित्र का पालन करके शुक्ल ध्यानाग्नि द्वारा अष्टकर्मों को जला देने पर मोक्ष प्राप्त होगी।

श्रावक–उपकार, भगवन् उपकार। आशीर्वाद दीजिये, कि हम मनुष्यधर्म का पालन करके अपना जन्म सुफल करें।

भगवान्–तथास्तु ! तुम्हारा कल्याण हो ।

[श्रावकों का जाना]

भगवान्–अब आहार लेने का समय होगया है चलूं किन्तु मैं प्रतिज्ञा करता हूं कि उस समय तक आहार नहीं करूंगा जब तक कि

इस प्रकार का आहार न मिले कि आहार देने वाली किसी राजा की कन्या हो और आहार देते समय वह दासी बनी हुई हो, हाथ और पांव में लोहे की ज़ंजीरें हों शिर के केश मुड़े हुए हों रोती भी हो और हंसती भी हो एक पांव चौखट के अन्दर और एक पैर चौखट के बाहर हो सूप में उड़द के बकले रख कर वह मुझे दान दे, यदि इस प्रकार आहार मिला तो मैं उसे ग्रहण करूंगा नहीं तो नहीं।

(जाना)

मनोरंजन

—:*:*:—
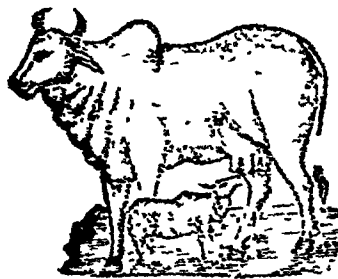
अङ्क ३ दृश्य ४

रास्ता

कन्हैयालाल, बनवारीलाल और श्यामनाथ चौधरियों के अत्याचार और पंचायत के अन्याय से तंग आकर अपनी जाति की दुर्दशा पर अफ़सोस ज़ाहिर करते हैं कन्हैयालाल कहता है कि श्यामनाथ यदि तुम मेरी बहिन सुशीला के साथ विवाह करने पर तय्यार हो जाओ तो मैं बिरादरी से इस बुरी रस्म को मिटाकर छोड़ूं श्यामनाथ इस नाते को स्वीकार कर लेता है तीनों मित्र अनाथ और निर्दोष कन्याओं को इस दुःख और घोर अत्याचार से बचाने का प्रण करते हैं।

(कन्हैयालाल बनवारीलाल और श्यामनाथ का प्रवेश)

कन्हैयालाल—प्यारे मित्रो ! चौधरियों की हठधर्मी और उनका दुष्टपना देखा ! कि यह लोग दो चार सौ रुपयों के लालच में फंसकर किस तरह ग़रीब और निर्दोष कन्याओं का जीवन नष्ट कर रहे हैं।

वनवारीलाल—देखा, और अच्छी तरह देखा और जो कुछ कर्म दिखाएंगे वह भी अवश्य देखना पड़ेगा जैन जैसे पवित्र धर्म में ऐसी निकम्मी बातें।

श्यामनाथ-परन्तु इन बातों का कोई उपाय ?

कन्हैयालाल—यदि जाति के दस बीस पुरुष भी मेरा साथ देने को तय्यार हों तो मैं इसका उपाय कर सकता हूं और बहुत ही आसानी के साथ कर सकता हूं।

वनवारीलाल—मैं तय्यार हूं।

श्यामनाथ मैं भी आप लोगों के साथ हूं।

कन्हैयालाल—पहिले सब बातों को अच्छी तरह सोच समझ लो फिर इस काम में हाथ डालो याद रक्खो यह एक दो से नहीं सारी जाति से बुराई मोल लेनी है क़दम क़दम पर हमें हर प्रकार की रुकावटों का सामना करना होगा विरादरी का वच्चा वच्चा हमारे लहू का प्यासा हो जायगा लोग वाग अधर्मी, पापी चाण्डाल और न जाने क्या क्या हमें कहेंगे। बड़ी बड़ी कुर्बानियां करनी पड़ेंगी तब कहीं जाकर हम अपने इरादों में कामयाब हो सकेंगे सैकड़ों वर्षों के रिवाज को मिटाना कोई मामूली काम नहीं ऐसा न हो आप लोग घबराकर पीछे हट जांय तो व्यर्थ में जग हंसाई हो।

उधर सब लोग होंगे इस तरफ दो चार ही होंगे।
हमारा साथ देने के लिये लाचार ही होंगे॥

समझलो सोचलो पहिले कि धनवानोंसे लड़नाहै ।
अनाथों के सहायक बनके बलवानों से लड़ना है ॥

बनवारीलाल—धर्म और अनाथों की रक्षा के कारण यदि प्राण भी गंवाने पड़ें तो भी ग़म नहीं ।

कन्हैयालाल—क्यों श्यामनाथ तुम्हारा इस विषय में क्या विचार है ?

श्यामनाथ-मित्रों मैं क्या और मेरा विचार क्या यदि आप भाइयों की यही इच्छा है तो मैं इससे ज्यादा कुछ नहीं कह सकता कि इस युद्ध में आप मुझे सबसे दो क़दम आगे ही पाएंगे ।

जो क़दम आगे बढ़ा पीछे वह हट सकता नहीं ।
कष्ट हो या दुःख हो सच्चा जोश घट सकता नहीं ॥
मुंहसे जो कह दूंगा इंकार उससे करने का नहीं ।
सामने यमदूत भी आए तो डरने का नहीं ॥

कन्हैयालाल—क्या तुम इस बात पर तय्यार हो ! कि यदि इस काम में माता पिता घर बार चैन सुख सबको त्यागना पड़े तो तुम उनको त्याग दोगे ?

श्यामनाथ-इन्हीं को नहीं धर्म और दया की रक्षा के लिये मैं अपना जीवन भी त्याग दूंगा ।

कन्हैयालाल—अच्छा तो सुनो मैं सबसे पहिले इस काम को अपने घर से करना चाहता हूं ।

श्यामनाथ-वो किस तरह ?

कन्हैयालाल—इस तरह कि तुम्हारे साथ अपनी बहिन का विवाह करदूं ।

श्यामनाथ-क्या कहा मेरे साथ और अपनी बहिन का विवाह ?

कन्हैयालाल—क्यों तुम चौंक क्यों पड़े इसमें आश्चर्य की क्या बात है ? क्या तुम जैनी नहीं हो ?

श्यामनाथ-मैं इसलिये चौंका कि तुम्हारे माता पिता मूलचन्द जैसे धनवान पुरुष को छोड़कर मुझ जैसे ग़रीब के साथ अपनी कन्या का विवाह क्यों करने लगे ।

कन्हैयालाल—माता पिता की चिन्ता न करो वह तैयार हों या न हों मैं तो तैयार हूं ।

श्यामनाथ-क्या तुम अपने माता पिता के विरुद्ध ऐसा कर सकोगे ।

कन्हैयालाल—जब माता पिता धन दौलत के लोभ से अंधे बन कर अपनी सन्तान को दुःख और मुसीबत के गढ़े में गिराने पर तैयार हैं तो मजबूरन ऐसा करना ही होगा ।

श्यामनाथ-इसका परिणाम क्या होगा तुमने इस पर भी ग़ौर कर लिया है ?

कन्हैयालाल—परिणाम अच्छा निकले या बुरा मैं नेक काम के मुक़ाबिले में इसकी परवाह नहीं करता ।

श्यामनाथ-यदि तुमने यही ठान ली है तो मुझे भी मंजूर है ।

बनवारीलाल-आज्ञा हो तो मैं भी कुछ कहूं ।

कन्हैयालाल—कहो और अवश्य कहो ।

वनवारीलाल—मैंने सुना है कि तुम्हारे माता पिता ने तीन हज़ार रुपये मूलचन्द से लिये हैं और आज के तीसरे दिन मूलचन्द तुम्हारी बहिन के साथ अपना विवाह करने तुम्हारे घर पर बरात लेकर जायगा ।

कन्हैयालाल—तो क्या हुआ, उसी रोज़ और ठीक उसी समय तुम भी दस बीस युवक पुरुषों को साथ लेकर आ जाना मैं उसी समय श्यामनाथ के साथ विवाह कर दूंगा ।

वनवारीलाल—और यदि मूलचन्द के साथियों और बिरादरी के चौधरियों ने कुछ झगड़ा मचाया—

कन्हैयालाल—तो डण्डों और जूतों से अच्छी तरह उनकी मरम्मत करदी जायगी ।

वनवारीलाल—अच्छी बात है मैं ठीक समय पर श्यामनाथ और अपने बहुत से मित्रों और सम्बन्धियों को लेकर वहां आ जाऊंगा ।

गायन ।

जो मुसीबत पड़ेगी, उठाएंगे हम ।
अपनी जाति को दुख से, बचायंगे हम ॥ टेक ॥
कह दिया जो मुंह से, मुंह उससे फिरा सकते नहीं ।
दाग़ बदनामी का माथे पर लगा सकते नहीं ॥

मन में जो है वो करके दिखायेंगे हम ॥ अपनी० ॥

भय नहीं इसका ज़रा भी शान जाए या रहे।
धर्म्म की रक्षा करेंगे जान जाए या रहे॥
देश-भक्ति में ख़ुद को मिटायेंगे हम ॥ अपनी० ॥

लड़कियां बिकने लगी हैं इस तरह संसार में।
बेचते हैं जिस तरह वस्तु कोई बाज़ार में॥
इस मुसीबत से उनको बचायेंगे हम ॥ अपनी ॥

धर्म्म को था नाज़ जिन पर वह अधर्मी बन गये।
पाप का करते थे जो खण्डन वह पापी बन गये॥
फिर अधर्मी को धर्मी बनायेंगे हम ॥ अपनी० ॥

धर्म्म के पालन से थी इस देश की शोभा कभी।
बच्चा बच्चा धर्म की माला फिराता था कभी॥
"नाज़" अब ज्ञानलीला रचायेंगे हम ॥ अपनी० ॥
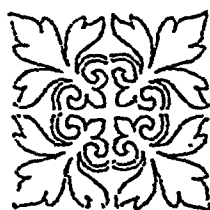
अङ्क ३ दृश्य ५

(सेठ धनवाहा का मकान)

सेठ धनवाहा की स्त्री मूला, राजकुमारी चन्दनबाला को अपनी सौत समझ कर मन ही मन में जलती है। उसकी पुरानी दासी सेठानी जी को समझाती और बहला फुसला कर पड़ोसन के घर लेजाती है उनके जाने के बाद सेठ धनवाहा बाज़ार से घर में अता है चन्दनबाला सेठ को अपना धर्म पिता और गुरु के समान जानते हुए उसके चरणों को धोने बैठजाती हैं। सेठ पुत्री प्रेम के विचार से चन्दनबाला के धरती पर लटके हुए बालों को उठा कर गोद में रख लेता है अचानक उसी समय मूर्ख मूला पड़ोसन के घर से लौटकर आती और यह दृश्य देख कर कांप जाती हैं सेठ के घर से बाहर जाने के बाद नाई को बुलाकर निर्दोष चन्दनबाला का सिर मुडवा कर और हाथ पैरों में लोहे की बेड़ियां हथकड़ियां डलवाकर उसे एक तहखाने में कैद कर देती है।

[मूला का प्रवेश]

गाना

क्या कहूं भाग ने क्या, हाल बना रक्खा है?
ग़म की अग्नि ने मुझे हाय जला रक्खा है॥
कौन इस दुःख भरी हालत से छुड़ाए मुझको।
बे सबब जिसने मुझे, सुख से छुड़ा रक्खा है॥
बैठे बिठलाए लगा रोग यह कैसा जिसने।
जीते जी मुझको ज़माने से मिटा रक्खा है॥
कैसा घरबार नहीं है मुझे अपनी चिन्ता।
इस मुसीबत ने तो दीवाना बना रक्खा है॥
न टला है न टलेगा कभी कर्मों का लिखा।
'नाज़ यूं' चीखने चिल्लाने में क्या रक्खा है?

मूला–हर घड़ी कुढ़ना, हरदम क्रोध और दुःख की अग्नि में जलना क्या ऐसा जीवन भी संसार में जीवन कहलाने का अधिकारी हो सका है? सत्य है सौत के साथ एक घड़ी भी जीवन बिताने से फांसी के फन्दे में लटक कर या विष का एक घूंट पीकर प्राण त्याग देना लाखों दर्जा अच्छा है कारण यही कि फांसी और विष का संकट केवल थोड़ी देर का संकट है और सौत का दुःख जन्म भर का दुःख है जिस प्रकार घुनदार कीड़ा धीरे धीरे लकड़ी को चाट जाता है उसी प्रकार सौतिया डाह की अग्नि भी स्त्री के शरीर को

अन्दर ही अन्दर जला कर भस्म कर देती है। सौत, हा ! मन ही नहीं सारे शरीर के रोंगटों को कपकपा देने वाला डरावना और भयानक शब्द, सौत है क्या, वास्तव में स्त्री के पूर्व जन्म के कर्मों का फल है, इसके आते ही स्त्री के सुख और सौभाग्य का सूर्य अस्त हो जाता है सौत के साथ राज सिंहासन पर बैठने और अच्छे अच्छे भोजन खाने के बदले टूटी फूटी झौंपड़ी में रहने और भिखारनियों की तरह भीख मांग मांग कर रूखे सूखे टुकड़ों से अपना पेट भरलेने को एक स्त्री खुशी से स्वीकार करलेगी।

हाथ मलने और रोने के सिवा चारा नहीं।
ज़िन्दगी के अन्त तक इस दुख से छुटकारा नहीं॥
एक दो क्या सैंकड़ों को इसने क्या मारा नहीं।
धार है तलवार की अमृत की ये धारा नहीं॥
जान की दुश्मन है ये सन्तोष की वैरन है ये।
ले सके करवट न काटा जिसका वो नागन है ये॥

दासी—पड़ौसन के यहां से दो तीन वार वुलावा आ चुका है चलियेगा या नहीं ?

मूला—मैं बड़ी देर से इसी विचार में हूं कि जाऊं या न जाऊं।

दासी—आपको इस समय अवश्य जाना चाहिए यदि आप न जायंगी तो उस ग़रीब के हृदय को बड़ा दुःख होगा।

मूला—ये ठीक है परन्तु जिस प्रकार मेरे न जाने से उसके हृदय

को दुःख होगा उसी प्रकार मेरे वहां जाने से मेरा बना बनाया घर मिट्टी में मिल जायगा ।

दासी-(आश्चर्य के साथ) यह कैसे ?

मूला-ऐसे कि जब मेरे मौजूद होते हुए सेठ इस सुन्दर कन्या से प्रेम भरी बातें करने हुए नहीं चूकता तो मेरे पीछे तो वोह ख़ूब ही जी भरकर खुल खेलेगा ।

दासी—(हाथ जोड़कर) सेठानी जी, क्षमा करो यह आपका केवल सन्देहमात्र है मैंने तो आज तक कोई बुरी बात उस ग़रीब लड़की में नहीं देखी बल्कि घर के काम काज से निब-टने के बाद जब देखा उसे ईश्वर उपासना और पूजा पाट ही में देखा ।

मूला—यही तो इसका वोह पाखण्ड है जिसके फन्दे में फँसकर सेठ उस पर मोहित हो रहा है क्या तूने नहीं देखा कि सेठ घर में प्रवेश करते ही सबसे पहिले उसे आवाज़ देना और यह मालूम हो जाने पर कि "वोह भोजन कर चुकी है" ख़ुद भोजन करता है, घण्टों उसके पास बैठकर बातें करना और मुझसे ज़्यादा उसका मान रखना है ।

दासी—इसका कारण मेरी समझ में तो यही आता है कि जिस प्रकार सेठ जी के मन में दया और धर्म का चमत्कार फैला हुआ है उसी प्रकार चन्दनबाला भी इन बातों से सम्बन्ध रखती है । शुद्ध गुण की सुगन्धि से उसके हृदय को सुवा-सित पाकर सेठ जी भी उससे प्रेम करने लगे इसमें आश्चर्य

की क्या बात है ? यह तो हर मनुष्य का नियम है कि वोह अपनी ही जैसी भावनाएं रखनेवाले मनुष्य को देखकर प्रसन्न होता और सबसे अधिक उसका आदर करता है।

जो ख़ुद भले हैं भलों का ध्यान रखते हैं।
कुछ अपने से भी सिवा उनका मान रखते हैं॥
चुभे जो एक के कांटा तो सब तड़प जाएं।
मिले न सुख उसे जब तक न ये भी सुख पाएं॥

मूला–कुछ भी हो परन्तु मेरा मन इसको एक घड़ी के लिये भी सहन नहीं कर सक्ता कि मेरे सामने सेठ हँस हँस के उस छोकरी से प्रेम की बातें करे और मैं बैठी जला करूं, याद रख जिस दिन मुझे ज़रा भी अवसर मिल गया उसी दिन इस कुटनी को अपने घर से निकाल दूंगी।

दासी–मेरा भी यही कहना है कि बिना कारण अपने को दुखी करने से क्या होता है जब तक हम पाप और पापियों को अपने नेत्रों से न देखलें उस वक्त तक हमें किसी मनुष्य पर चाहे वह हमारा कैसा ही शत्रु हो क्यों न हो कदापि दोष नहीं लगाना चाहिए यदि ऐसा ही हुआ जैसा आपका विचार है तो सब से पहिले मैं उसकी शत्रु हो जाऊंगी आप तो केवल घर से निकालने ही को कहती हैं परन्तु मैं ऐसी पापन को ज़िन्दा धरती में गाड़देने पर भी बस न करूं।

मूला–(प्रसन्न होकर) मेरी प्यारी दासी! तेरे इन शब्दों से इस

समय मेरे हृदय को बड़ा आनन्द प्राप्त हुआ मन की सारी शङ्काएं दूर होगईं मैं आज से वही करूंगी जो तू कहेगी।

दासी–(हाथ जोड़ कर) मेरी प्रार्थना है कि इस समय आपको पड़ौसन के घर अवश्य जाना चाहिए यदि ज्यादा देर के लिये नहीं तो थोड़ी ही देर के लिये परन्तु जाना जरूर चाहिए।

मूला–अच्छी बात है मैं जाती हूं किन्तु तुझे भी मेरे साथ चलना होगा।

दासी–पहिले आप चलें मैं घर का थोड़ासा काम करके अभी आती हूं।

(मूला यह सुन कर पड़ौसन के घर जाती है उसके जाने के बाद दासी कहती है)

दासी–आहा ! मनुष्य का हृदय भी कैसा विचित्र होता है जब इसमें किसी की ओर से बुराई बैठ जाती है तो फिर वह दूसरों के निकालने से भी नहीं निकलती सेठानी जी को न जाने इस बुढ़ापे में क्या हो गया है कि बिना अपराध ऐसी धर्म्म उपासिका और गऊ जैसी ग़रीब कन्या की दुश्मन बन गईं ओ अभागिनि चन्दनबाला तू न जाने कितनी अच्छी अच्छी आशाएं लेकर यहां आई होगी परन्तु याद रख ये बुद्धिहीन और खोटे विचारों वाली मूला तुझे इस घर में अधिक दिनों तक नहीं ठहरने देगी।

कहां का चैन कैसा सुख, किस आफ़त में फंसाती है ।
तेरी फूटी हुई क़िस्मत, तुझे क्या क्या दिखाती है ॥
मिला देते हैं जैसे कांच, भोजन के निवाले में ।
युंहीं कुछ विष की बूंदें हैं, इस अमृत के प्याले में ॥

(दासी के जाते ही सेठ धनवाहा का प्रवेश)

सेठ धनवाहा—धन दौलत गाम, ग्राम तो क्या राजपाट और अनेक प्रकार के सुखों के होते हुए भी मनुष्य के हृदय को उस समय तक सच्चा आनन्द प्राप्त नहीं होता जब तक घर की शोभा और कुलका मान अथवा कोई बालक पुत्र हो तथा पुत्री उसकी गोद में नहीं यही वह वस्तु है जिसको मनुष्य संसार की समस्त वस्तुओं से अधिक प्यार करता है यही वह वस्तु है जिस पर धन दौलत और चैन सुख तो कैसा माता पिता अपना जीवन तक अर्पण कर देते हैं इसके लिए जंत्र मंत्र जादू टोना साधू संन्यासियों की सेवा ईश्वर उपासना कौनसा ऐसा यत्न है जो मनुष्य नहीं करता और जब इस पर भी उसके मनका कमल नहीं खिलता तो दूसरे की संतान को गोद लेकर उसका पालन पोषण करता और अपना जी बहलाता है मुझी को देखो सब कुछ होते हुए भी केवल एक संतान के न होने से घर काटने को दौड़ता था परन्तु जिस रोज़ से चंदनबाला जैसी सुन्दरी और धर्मी पुत्री हाथ आई है मेरे मन की शांति और घर की शोभा प्रतिदिन बढ़ती ही जाती है ।

जवानों की ख़ुशी है और बूढ़ों का सहारा है।
पिता के मन का सुख माता की आंखों का ये तारा है।
विना इसके दुःखों ही में गुज़रता है सदा जीवन।
न हो वालक तो फिर वे अर्थ है मां वाप का जीवन॥

गायन

दिल की ठडक और आंखों का उजाला है यही।
सुख पिता का है तो माता का दुलारा है यही॥
हो न जिस घर में कोई वालक वह घर वीरान है।
कुल का गौरव और सारे घर की शोभा है यही॥
इससे वढ़कर कोई भी वस्तु नहीं संसार में।
धन भी जिसके सामने तुच्छ है वह प्यारा है यही॥
इसके होने से गुज़र जाती है सुख से ज़िन्दगी।
सच अगर पूछो वुढ़ापे का सहारा है यही॥
इससे वढ़कर और कुछ ऐ 'नाज़' कह सकता नहीं।
दिल के ज़ख्मों के लिये मरहम का फाहा है यही॥

चंदनवाला—(दाखिल होकर सीस नवाते हुए) पिताजी नमस्कार

सेठ धनवाहा—सुखी रहो पुत्री सुखी रहो, तुम्हारी माता कहां है?

चंदनवाला—माता जी तो पड़ौसन के घर गई हैं।

सेठ धनवाहा—और दासी?

चंदनवाला—वह भी माता जी के साथ गई हैं।

सेठ धनवाहा-अच्छा तुम हाथ पांव धोने के लिये थोड़ासा जल लादो।

चंदनबाला-जो आज्ञा! आप इस चौकी पर विराजें मैं अभी जल लाकर आपके हाथ पांव धुलाती हूं।

(चंदनबाला लोटा और जल लेने जाती है)

सेठ धनवाहा-कैसी भोली भाली और गुणवती पुत्री जो अपने पिता के समान मुझसे प्रेम करती और दासियों से बढ़कर मेरी सेवा करती है।

(चन्दनबाला जल का लोटा लेकर आती है)

चंदनबाला-लाइये पिता जी मैं आपके चरण धोऊं।

सेठ धनवाहा-नहीं पुत्री तुम जल का लोटा मुझे दे दो मैं अपने आप धोलूंगा।

चंदनबाला-(हाथ जोड़कर) मेरे पूज्य धर्मपिता दासी का मन न तोड़िये इन पवित्र चरणों के धोने ही में मेरी मुक्ती और मोक्ष है।

यही करनी है वह करनी जो मेरे काम आएगी।
इन्हीं चरणों की रज सन्मान दासी का बढ़ाएगी॥
गुरुभक्ति, बुराई और पापों से बचाएगी।
पिता सेवा ही रस्ता स्वर्ग का एक दिन बताएगी॥
वही सुख भोगते हैं, आज हैं चिन्ता जिन्हें कलकी।
न बोए बीज जब तक किस तरह आशा रखे फलकी॥

(चंदनवाला सेठ धनवाहा के पांव धोती है सेठ चंदनवाला
के ज़मीन पर पड़े हुए केश उठाकर गोद में रख
लेता है उसी समय मूला पड़ौसन के घर से
लौटकर आती और यह दृश्य देखकर
मन ही मन में कहती है)

मूला-वही हुआ जिसका मुझे भय था सेठ अवश्य ही इस रूपवती रमणी पर मोहित है।

सेठ धनवाहा—(पैर धुलने के बाद चौकी पर से उठकर) अच्छा पुत्री मैं बाहर जाता हूं। तू अपनी माता से कह देना।

चंदनवाला—जो आज्ञा।

(सेठ घर के बाहर जाता है चन्दनवाला लोटा रखने
अन्दर जाती है, मूला प्रगट होती है।)

मूला-अब किसी प्रमाण की क्या आवश्यकता है? अब तो मैं प्रत्यक्ष अपनी आंखों से सब कुछ देख चुकी, भलाई इसी में है कि इस मृगनैनी को सेठ से पूरी पूरी लगन लगने के पहिले ही घर से बाहर कर दूं या विष देकर इसे मार डालूं परन्तु इसमें जीव हत्या का पाप होगा फिर क्या करूं? कुछ सोचकर) बस यही ठीक है दासी अरी ओ दासी!

दासी—जी बाई जी।

मूला-बाई जी की बच्ची, कहां थी क्या कर रही थी?

दासी —कहीं नहीं मैं तो आपके पीछे पीछे आ रही हूं।

मूला-देख भागती हुई जाना और दौड़ती हुई आना और अपने साथ एक नाई को लेती आना ।

दासी—नाई का क्या होगा आख़िर आप इस क़दर घबराई हुई क्यों हैं ।

मूला-कारण पूछने का तुझे कोई अधिकार नहीं । तेरा कर्तव्य केवल इतना ही है कि हर घड़ी मेरी आज्ञा का पालन करे ।

दासी-यह तो ठीक है परन्तु..............।

मूला-बस परन्तु वरन्तु कुछ नहीं अभी जा और भागती हुई जा ।

दासी-यह चली ।

[दासी के जाने के बाद]

मूला-अरी ओ चन्दनबाला ।

चंदनबाला-(दाख़िल होकर) क्या है माता जी ?

मूला-(बिगड़कर) कौन माता और किसकी माता मैं माता नहीं, तेरी सौत हूं सौत ।

चंदनबाला-(आश्चर्य के साथ) यह आप कैसे शब्द मुंह से निकाल रहीं हैं । सौत, कैसी सौत ।

मूला-मैं उड़ती चिड़या को पहिचान लेती हूं मेरे सामने तेरी यह चतुराई नहीं चलने की ।

चंदनबाला-मैं अभी तक नहीं समझी कि आप क्या कह रही हैं ?

मूला-घबरा नहीं थोड़ी देर में सब कुछ समझ जायगी बेचारी

कैसी नासमझ और नन्ही है कि कुछ जानती ही नहीं। (क्रोधित होकर) अरी ओ चाण्डालनी जिस थाली में खाना उसी में छेद करना मैं तो पहिले दिन ही तुझे देखकर खटक गई थी परन्तु क्या करू' तू ने उस बूढ़े खूसट को कुछ इस प्रकार अपने वस में कर रक्खा है कि वह किसी की नहीं सुनता।

चंदनवाला-कैसी थाली, कैसा छेद, इसका अर्थ?

मूला-अर्थ की बच्ची बता अभी सेठ के साथ क्या बातें हो रही थीं?

चंदनवाला-बातें कैसी बातें मैं तो उनके चर्ण धो रही थी।

मूला-मैं भी तो यही कहती हू' कि तू उस कामी बूढ़े के चर्ण धो रही थी और वह एक सुन्दर सलौनी स्त्री के केश सुलझा रहा था।

चंदनवाला-क्या पिता का पुत्री के या गुरु का शिष्या के सर पर हाथ फेरना या उसके बालों को छूना कोई पाप या अप-राध हो सक्ता है?

मूला-(उंगलियां मटकाकर और मुंह बना कर) बिलकुल नहीं ज़रा भी नहीं, पाप की भी एक ही कही परस्त्री को गले लगाने और उसके साथ प्रेम की बातें करने से बढ़कर संसार में कोई धर्मकार्य और पुण्य नहीं।

चंदनवाला-(हाथ जोड़ कर) माता जी आपके मन में जो आप

कहा कीजिये किन्तु एक निर्दोष और क्षत्री स्त्री के सतीत्व पर ऐसा दोष न लगाइये।

मूला–आई वहां से बड़ी सती सीता बनकर देखना कहीं सती के श्राप से आकाश न गिर पड़े धरती न फट जाये देवता क्रोधित होकर स्वर्ग से न निकल आएं।

चंदनबाला–ये सब कुछ हो सक्ता है परन्तु क्या करूं मजबूर हूं कि आपका अन्न खाचुकी हूं और आपको माता कह चुकी हूं।

आपका अन, जल मुझे, मुंह खोलने देता नहीं।
किस तरह बोलूं कि यह, कुछ बोलने देता नहीं॥
सर पै रक्खा हाथ, पास अपने बिठाया प्यार से।
सर उठा सक्ती नहीं, मैं आपके उपकार से॥

मूला–उन्हीं उपकारों का यह बदला है कि तू मेरे पति को अपने प्रेम के फन्दे में फँसा कर मेरी सौत बनना चाहती है?

चंदनबाला–जिस हृदय में ऐसी नीच भावनाएं पैदा हों उसमें अपने हाथ से खञ्जर भौंकदूं जिस सर में ऐसे गन्दे विचार उत्पन्न हों उसे अपने हाथ से काट कर फेंकदूं।

मिला दूं खाक में तन मन, लगादूं आग जीवन में।
बुराई का अगर, धब्बा, लगे नेकी के दामन में॥
जो सतपन छोड़दे अपना, वह नारी क्या है नागन है।
अधर्मन है बला है, राक्षसनी और पापन है॥

(दासी नाई को लेकर आती है)

मूला-(दासी से) बड़े दालान के पास जो कोठड़ी है उसमें लोहे की मोटी मोटी जंजीरें रक्खी हैं वह लेआ।

दासी-जो आज्ञा (जाती है)

मूला-(नाई से) इस स्त्री का सर मूंडदे इसने संसार को त्याग कर सन्यास धारण करने का प्रण किया है।

चन्दनवाला मूला की आज्ञा के अनुसार सर झुकाकर चुपचाप
बैठ जाती है नाई सर मूंड कर जाता है दासी जंजीरें
लेकर आती है और चन्दनवाला को दुर्दशा देखकर
आश्चर्य करती है मूला चन्दनवाला के हाथों
में हथकड़ी और पैरों में बेड़ी पहना
कर तहखाने की तरफ़ चलने
का इशारा करती है।

मूला-(दासी से) याद रख अगर तूने सेठ से एक शब्द भी इस के बारे में कहा तो मैं तेरी भी दुश्मन हो जाऊंगी (चन्दनवाला से) चाण्डालनी मेरे साथ आ।

चंदनवाला-(बड़ी गम्भीरता के साथ) माता जी चिन्ता न कीजिए दूसरों की तो कहती नहीं परन्तु मेरे मुंह से एक शब्द भी आपके विरुद्ध न निकलेगा यह कष्ट तो क्या है यदि

आपकी आज्ञा हो तो दासी अपने हाथों से आपके पवित्र चरणों पर अपना जीवन अर्पण करदे ।

मोड़ले सच्चाई से मुंह, मन की ये हालत नहीं ।
क्षत्राणी के लहू में, ख़ौफ़ की रङ्गत नहीं ॥
पाप का अपराध का, सुख का बदल हो जाएगा ।
इस तरह मरने से यह, जीवन सुफल हो जाएगा ॥

[आगे आगे मूला और उसके पीछे पीछे चन्दनबाला गर्दन झुकाए तहख़ाने की तरफ़ जाती है]

अङ्क ३ दृश्य ६

लाला ज्ञानीप्रसाद का मकान

महाशय रतनलाल सेठ मूलचन्द को दूल्हा बनाकर लाता, और लाला ज्ञानीप्रसाद की नादान कन्या सुशीला के साथ उसका विवाह करना चाहता है, कि उसी समय कन्हैयालाल के कहने के मुताबिक़ वनवारीलाल भी अपने मित्र श्यामनाथ को दूल्हा बनाकर और साथ में कुछ पुरुषों को लेकर वहां आ जाता है सब लोग दूसरी बारात को देख कर घबराते हैं कि इतने में कन्हैयालाल घर में से निकलता और श्यामनाथ के साथ अपनी बहिन सुशीला का विवाह करके मूलचंद और उसके साथियों को धक्के देकर घर से निकाल देता है।

[ला० ज्ञानीप्रसाद और कलावती का प्रवेश]

लाला ज्ञानीप्रसाद—(रुक्मणि से) क्यों सब काम ठीक हैं ना थोड़ी देर में बारात आने ही वाली है।

रुक्मणि— मैंने अपनी जान में तो सब कुछ ठीक कर लिया है।

लाला ज्ञानीप्रसाद—अच्छा दरी चादर और तकिया ले आओ उन्हें भी बिछादें।

—आप यहीं ठहरें मैं सब चीज़ें लाती हूं।

लाला ज्ञानीप्रसाद—कन्हैयालाल कहां है ?

रुक्मणि—वह तो कहीं बाहर गया हुआ है।

लाला ज्ञानीप्रसाद—इस छोकरे के मारे तो मेरा दम नाक में आ गया जब बिरादरी के लोगों और चौधरियों ने इस नातेको स्वीकार कर लिया तो फिर दूसरों को बोलने का क्या अधिकार है मैंने दो तीन बार कन्हैया से पूछा परन्तु उसने "जो आपकी इच्छा" कहकर टाल दिया कुछ तुमने भी पूछा कि आख़िर उसका विचार क्या है।

रुक्मणि—मैंने तो कई बार पूछा परन्तु वह कुछ कहता ही नहीं ईश्वर जाने उसके मन में क्या है।

लाला ज्ञानीप्रसाद—होगा क्या धूल पत्थर एक कन्हैया को क्या रोएं आजकल के जितने छोकरे हैं सबकी यही हालत है कि बड़े बूढ़ों को अपने सामने कुछ समझते ही नहीं अभी पंचायत वाले दिन की बात है कि इसी के दो तीन साथियों ने ग़रीब चौधरियों और महाशय रतनलाल जीको ऐसी उल्टी सीधी बातें सुनाईं कि वे बेचारे अपना सा मुंह लेकर रह गये अच्छा जाओ तुम दरी वरी तो लाओ।

कमलावती अन्दर से दरी तकिया आदि लाती है
दोनों मिलकर उसे बिछाते हैं महाशय
रतनलाल आकर बारात के आने की
ख़बर सुनाते हैं।

म० रतनलाल–(अन्दर आकर) क्यों लाला साहिब यहां सब ठीक ठाक है ना बारात घर से चल चुकी है "भजकलद्दारम् भजकलद्दारम् ।"

लाला ज्ञानीप्रसाद—ईश्वर की दया और आपकी कृपा से सब ठीक है।

म० रतनलाल–बस यही चाहिये।

इतने में बाजों की आवाज़ आती है महाशय रतनलाल और लाला ज्ञानीप्रसाद बाहर जाते और बारात को अपने साथ लेकर अन्दर आते हैं बरातियों के बैठ जाने के बाद।

लाला ज्ञानीप्रसाद—महाशय रतनलाल जी आपने भांवरों का लग्न तो देख लिया ना ?

म० रतनलाल–आप निश्चय रक्खें आज का लग्न बड़ा ही उत्तम और शुभलग्न है ठीक छः बजे भांवरें फिरनी चाहए । बस कुछ देर नहीं सिर्फ १५ मिनट बाक़ी हैं। 'मीन' 'मेष' 'वृश्चिक' तुला धन ओहो बड़ा ही अच्छा लगन "भजकलद्दारम् भजकलद्दारम् ।"

बनवारीलाल श्यामनाथ और अपने मित्रों को लेकर वहां आता है श्यामनाथ जो दूल्हा बना हुआ है मूलचंद के बराबर जाकर बैठ जाता है।

म० रतनलाल–(घबराकर बनवारीलाल से पूछते हैं) यह कैसा स्वांग ?

बनवारीलाल—महाशयजी यह स्वांग नहीं बरात है।

म० रतनलाल-कैसी बारात क्या लाला ज्ञानीप्रसाद जी के दूसरी कन्या भी है।

बनवारीलाल—यह तो मैं नहीं जानता आप ही को मालूम है।

म० रतनलाल-तुम नहीं जानते तो फिर यह बारात कैसी।

कन्हैयालाल-[दाखिल होकर] महाशय जी घबराइये नहीं मेरे सिर्फ एक ही बहिन है और उसी के साथ श्यामनाथ का विवाह होगा।

म० रनतलाल-क्या कहा क्या सुशीला के साथ श्यामनाथ का विवाह होगा? "भज कलदारम् भज कलदारम्"

कन्हैयालाल-जी हां आज का लगन ऐसा ही समझिये। "भज कलदाम् भज कलदारम्"

म० रतनलाल-और सेठ मूलचन्द जी का विवाह किसके साथ होगा?

कन्हैयालाल-आपकी माता के साथ। "भज कलदारम् भज कलदारम्"

म० रतनलाल—कन्हैयालाल जी आप मुझे गालियां देते हैं।

कन्हैयालाल-यह तो गालियां ही हैं अभी थोड़ी देर में जब जूतों से खबर ली जायगी उस वक्त आपको भज कलदारम् का मन्त्र खूब याद आएगा। निर्लज्ज दुराचारी साठ वर्ष के

बूढ़े के साथ आठ वर्ष की कन्या का विवाह कराता है तुझे ज़रा भी लज्जा प्राप्त नहीं होती वह नादान कन्या इस खूसट के योग्य हो सकी है या तेरी माता, तू ही न्याय कर।

मूलचंद–(घबरा कर) क्यों महाशय जी यह क्या हो रहा है ?

म० रतनलाल–घबराइये नहीं मैं अभी उसका उपाय करता हूं। (ज्ञानीप्रसाद से) क्यों लाला ज्ञानीप्रसाद जी ये कैसा ढोंग है आप मुंह से बोलते क्यों नहीं।

ला० ज्ञानीप्रसाद–(बिगड़ कर) कन्हैयालाल तुझे क्या हो गया है।

कन्हैयालाल–कुछ नहीं।

ला० ज्ञानीप्रसाद–मैं पिता हूं और पिता होने के कारण आज्ञा करता हूं कि तुम अपने बदमाश दोस्तों को लेकर इसी दम यहां से चले जाओ और इस विवाह में विघ्न न डालो।

कन्हैयालाल–निश्चय आप मेरे पिता हैं परन्तु इस समय धन के लोभ में फँस कर आपकी बुद्धि हीन हो गई है जिसके कारण आप मेरी निर्दोष बहिन के साथ ऐसा अत्याचार करने को तय्यार हैं इसलिए मैं अपने प्राण दे दूंगा किन्तु इस बुड्ढे के साथ इसका विवाह न होने दूंगा (मित्रों से) यारो क्या देखते हो निकालो इन पाजियों को।

[बराती और चौधरी लोग मार का नाम सुनते ही वहां से भाग जाते हैं)

मूलचंद–अरे पर मेरा पांच हज़ार रुपया क्या यूंहीडूब जायगा।

कन्हैयालाल–कैसा पांच हज़ार रुपया?

मूलचंद–जो महाशय रतनलाल जी के द्वारा तुम्हारे पिता जी को दिया गया।

ला० ज्ञानीप्रसाद–मुझे सिर्फ तीन हज़ार रुपया दिया गया है।

मूलचंद–क्यों महाशय जी आपने तो मुझ से कहा था कि लड़की के माता पिता को पांच हज़ार रुपया दिया गया।

म० रतनलाल–हां हां इसमें झूट क्या है तीन हज़ार रुपया ला० ज्ञानीप्रसाद जी को दिया गया और दो हज़ार रुपया चौध-रियों को दिया मैंने कुछ बीच में तो रख ही नहीं लिया।

कन्हैयालाल–(मूलचन्द से) आप भी किस पापी पाखण्डी की बातों में आगये अब भलाई इसीमें है कि ठंडे ठंडे घर पधारिए तीन हज़ार रुपया जो मेरे पिता जी को दिया गया है वह मैं कल ही आपको लौटा दूंगा बाक़ी दो हज़ार रुपया आप महाशय जी से वसूल करें।

मूलचंद–(सर पीटकर) अरे दो हज़ार कैसा? इसने तो मेरे साढ़े दस हज़ार रुपयों पर पानी फेर दिया। चौधरियों को देने के लिये मुझसे पांच सौ रुपये अलग लिये दो हज़ार रुपये का गहना और एक हज़ार रुपये के कपड़े बनवाये और दो हज़ार रुपया खाने में उठवा दिया, हाय रे मेरे ईश्वर मेरी ज़िन्दगी भर की कमाई इस अन्यायी ने बरबाद करा दी।

कन्हैयालाल–अच्छा यह रोना आप घर जाके रोवें विवाह के समय ऐसी बदशगुनी यहां न करो (धक्का देकर) आओ चलते बनो।

(महाशय रतनलाल भी भागना चाहता है बनवारीलाल दौड़कर पकड़ लेता है)

बनवारीलाल–महाशय जी ठहरिये आप कहां चले कहिये आज किस नक्षत्र में घर से निकले थे ? "भज कलदारम् भज कलदारम् ।"

कन्हैयालाल–मेरी राय में तो अब महाशय जी को यह सज़ा देनी चाहिये कि इनकी पोथी पत्रा फाड़कर फेंकदो और मुंह काला करके उलटे गधे पर बिठाकर सारे शहर में इनको घुमाओ ।

बनवारीलाल–टूटी हुई जूतियों का एक हार भी इनके गले में अवश्य ही होना चाहिये।

श्यामनाथ–यह तो बहुत थोड़ी सज़ा है इन्हें दो चार दिन किसी अंधेरी कोठरी में बन्द करदो और खाने पीने को अन्न जल बिल्कुल न दो क्यों महाशय जी इन दोनों से मेरी राय ठीक है ना ?

महाशय रतनलाल—तो क्या तुम एक पंडित देवता के प्राण लोगे ?

श्यामनाथ–इसमें हर्ज ही क्या है तुम भोले भाले पुरुषों से रुपया लो और हम रुपयों के बदले तुम जैसे पापियों और पाखंडियों के प्राण भी न लें।

महाशय रतनलाल–याद रक्खो जीवहत्या से बढ़कर संसार में कोई पाप नहीं।

कन्हैयालाल–पंडित जी हमारे पाप का तो प्रायश्चित हो भी सकता है परन्तु तुमने तो ऐसे ऐसे घोरपाप किए हैं जिनका संसार में प्रायश्चित ही नहीं।

महाशय रतनलाल–(ज्ञानीप्रसाद के चरणों में गिरकर) लाला साहब मुझे बचाओ मैं सौगन्द खाता हूं कि अब कभी ऐसा न करूंगा यह लोग एक निर्दोष ब्राह्मण के प्राण लेने पर तय्यार हैं।

लाला ज्ञानीप्रसाद–कन्हैयालाल इसमें संदेह नहीं कि इसने मुझे बड़ा धोखा दिया परन्तु अन्हिसा परमो धर्मः की लाज रखते हुए इसे क्षमा करो मैं बड़ी प्रसन्नता के साथ तुम्हारे मित्र श्यामनाथ से सुशीला का विवाह करने को तय्यार हूं।

कन्हैयालाल-बनबारीलाल देखते क्या हो इस पाखण्डी की पोथी और पत्रा सब छीन लो और दो चार धौलें लगाकर इसे निकाल दो।

महाशय रतनलाल जी वहां से भागते हैं उनके जाने के बाद लाला ज्ञानीप्रसाद की आज्ञा से श्यामनाथ के

साथ सुशीला की भांवरी पड़ती हैं विवाह
के बाद सब लोग गाते हैं।

गाना ।

आएं करनी पै तो हम करके दिखा देते हैं।
अपनी ठोकर से पहाड़ों को हिला देते हैं॥
दुःखहो या सुखहो नहीं करते फिर इसकी चिन्ता।
आन के वास्ते जीवन भी गंवा देते हैं॥
हो वह धनवान कि बलवान नहीं इसका ग़म।
जो हो वैरी उसे हम जग से मिटा देते हैं॥
तोड़ कर लाते हैं आकाश से तारे दम में।
जब बिगड़ते हैं तो धरनी को हिला देते हैं॥
रोक सक्ता है न दरिया न समुन्दर ऐ "नाज़"।
सांस से अपनी हम अग्नि को बुझा देते हैं॥

अङ्क ३ दृश्य ७

सेठ धनवाहा का मकान।

[सेठ धनवाहा तीन दिनसे चन्दनबाला को घरमें न देख कर अपनी पत्नी मूला से उसका हाल पूछता है और ठीक ठीक हाल न मालूम होने पर घबराता है दासी एकान्त में चन्दनबाला का सारा हाल सेठ से कहती है जिसे सुनकर सेठ घबराया हुआ तहखाने में जाता और वहां से चन्दनबाला को निकालकर मकान में लाता है मूला यह हाल सुनकर रसोईखाने में ताला लगाकर बाहर चली जाती है चन्दनबाला को भूखी और प्यासी देखकर सेठ की परेशानी— दासी थोड़े से उड़द लाकर देती है सेठ धनवाह एक छाज में वह उड़द डालकर चन्दनबाला के सामने रख देना और लुहार को बुलाने जाता है दासी जल लेने अन्दर जाती है ठीक उसी समय भगवान महावीर स्वामी वहां प्रवेश करते और चन्दनबाला के हाथ से दान स्वीकार करते हैं भगवान् की प्रतिज्ञा पूरी होने के कारण आकाश से देवता प्रगट होकर चन्दनबाला की काया पलट देते हैं। संसारी मनुष्यों को इस पाप से भरे हुए संसार में स्वर्ग का विचित्र दृश्य दिखाई देता है सेठ धनवाह लौटकर ये नज़ारा देखता और आश्चर्य करता है। चन्दनबाला देवताओं का ये उपकार देखकर संसार को त्यागकर

सन्यास धारण करती और सेठ धनवाहा के चरणों में शीस नवा देती है]

सेठ धनवाहा—सच सच बताओ चन्दनबाला कहां है ?

मूला—मैं क्या जानूं।

सेठ धनवाहा—(बिगड़कर) तुम ना जानोगी नो फिर कौन जानेगा क्या तुम घर में नहीं रहती हो ?

मूला—घरमें रहने से क्या होता है क्या मैं उसके पीछे पीछे फिरती हूं।

सेठ धनवाहा—सेठानी जी आज ही नहीं मैं बराबर तीन दिन से उसका हाल पूछ रहा हूं और तुम रोज़ इसी प्रकार ऊट पटांग जवाब देकर मुझे टाल देती हो।

मूला—आखिर तुम्हें इतनी चिंता क्यों है ? कहीं पास पड़ोस में गई होगी।

सेठ धनवाहा—तुम्हारे शब्दों से मेरे मन में अनेक प्रकार के सन्देह उत्पन्न हो गये हैं इस कारण मैं आज उसका पता लगाकर रहूंगा। हा ! कितने शोक की बात है कि जिसे देखे बिना घड़ी भर भी चैन नहीं पड़ता था वह सुन्दर और प्यारा मुखड़ा आज तीन दिन से मेरी आंखों से छुपा हुआ है याद रक्खो ! जब तक मैं धर्म और ज्ञान की इस पवित्र मूर्ती को देख न लूंगा मेरे हृदय को सुख और चैन प्राप्त न होगा।

मूला—एक दासी का इतना मान ?

सेठ धनवाहा—'दासी' 'कौन दासी' और 'किसकी दासी' अरी ओ मूर्ख और बुद्धिहीन नारी वह दासी नहीं देवी है स्वर्ग की अप्सरा है जिसके पवित्र चरणों से यही नहीं कि इस घर की शोभा बढ़ गई बल्कि सत्य तो ये है कि हमारे भाग को चार चांद लग गये।

मूला—(चिढ़कर) चार नहीं आठ चांद लग गये अच्छा तुम भोजन तो करलो फिर उसका खोज लगा लेना।

सेठ धनवाहा—मुझे इस समय खाने पीने की ज़रा भी इच्छा नहीं।

मूला—भोजन क्या अबतो तुम्हें भवन भी न सुहाता होगा यह तो मैं पहिले ही जानती थी कि उस छबीली रसीली की रस भरी तानो में तुम मस्त हो रहे हो उस मोहनी के मोह में पड़कर तुम्हारी मत मारी गई।

उधर छबीली का रूप बदला इधर बुढ़ापे का प्यार बदला।
जो उसके गालोंकी लाली देखी तो आंख बदली विचार बदला॥
बना के लाए थे जिसको पुत्री उसी को पत्नी बना रहे हैं।
बिरह की अग्नि में जल के अपना समस्त जीवन जला रहे हैं॥

सेठ धनवाहा—मैं तुम्हारी इस बकवाद का जरा भी अर्थ नहीं समझा।

मूला—इसका अर्थ यह है कि जिस क़दर तुम्हारे मनमें उसकी प्रीति है यदि उसको भी तुम्हारी इतनी ही प्रीति होती तो वह कभी

इस प्रकार तुम्हें अपने वियोग में तड़पना छोड़कर इधर उधर मारी न फिरती।

सेठ धनवाहा—सेठानी जी यह गोल मोल बातें ठीक नहीं मुझे साफ़ साफ़ बताओ कि मेरी चन्दनबाला कहां है।

मूला—सेठ जी चन्दनबाला अब वह चन्दनबाला नहीं रही धर्म और ज्ञान के बदले आजकल इसके मन में सेर सपाटे की कामनाए उत्पन्न हो रही हैं वह सारा सारा दिन नौ जवानों और सुन्दर छोकरों के साथ खेल कूद में बिता देती है घर में एक घड़ी भी टिकना उसे पहाड़ मालूम होता है मालूम नहीं वह छबीली रसीली इस समय कहा रंग रेलियां मना रही होगी। (दिल्लगी से मुंह चिढ़ाते हुए) अरी ओ चतुर चंदनबाला! देख बेचारे सेठ जी तेरे पीछे अन्न जल सब छोड़ बैठे इस कारण आजा और जल्दी आजा यदि तू न आई तो सेठ जी का फूल सा कोमल शरीर झट मुर्झा जायगा। चंदन अरी ओ चंदन! अगर तू सचमुच चंदन है तो अभी आकर अपने वियोगमें जलते हुए सेठ जी के हृदयको ठंडक पहुंचा।

सेठ धनवाहा—तुम्हें दिल्लगी सूझी है और मेरी जान पर बन रही है हां हां मैं जिन भगवानको साक्षी करके प्रतिज्ञा करता हूं कि जब तक वह सती नहीं आयगी मैं अवश्य ही अन्न जल को हाथ न लगाऊंगा जाओ इस समय तुम मेरे सामने से चली जाओ।

(मूला सेठ जी को क्रोधित देखकर वहां से टल जाती है)

सेठ धनवाहा—कोई नहीं बताता अब क्या करूं कहां ढूंडूं वह भोली भाली कन्या आपसे कहीं जाने वाली नहीं मुझे तो इस में सेठानी की अवश्य शरारत जान पड़ती है अच्छा जो कर्म में लिखा है वह होकर रहेगा मैं तो अब प्रतिज्ञा कर चुका ख्वाह जान जाय या रहे।

मर्द उसको जानिये जो बात पर क़ायम रहे ।
ठान ले करने की पहिले तब कहीं मुंह से कहे ॥
कह के फिर जाये यह हानि है पुरुष की आन की ।
इसमें बरबादी है उसकी लाजकी और मान की ॥

दासी—(दाख़िल होकर) चिन्ता न कीजिए चंदनबाला आपको मिलेगी और अवश्य मिलेगी ।

सेठ धनवाहा—कब मिलेगी और कहां मिलेगी ?

दासी—इसी समय मिलेगी और यहीं मिलेगी।

सेठ धनवाहा—तुम्हारी सेठानी तो कहती हैं कि वह कहीं चली गई ।

दासी—सेठ जी आप किस भुलावे में हैं ख़ुद सेठानी जी ने इस निर्दोष बालिका को आज तीन दिन से अंधेरे तहखाने में बंद कर रक्खा है ।

सेठ धनवाहा— कारण ?

दासी—कारण यही कि सेठानी जी के मनमें यह संदेह पैदा हो गया है कि आप उसे अपनी स्त्री बनाना चाहते हैं।

सेठ धनवाहा—छिः छिः कैसा गंदा विचार।

दासी—यही नहीं बल्कि उसका सर मुंडवाकर हाथ पांव में लोहे की मोटी मोटी ज़ंजीरें डाल दी गई।

सेठ धनवाहा—घबराकर एक अनाथ बालिकापर ऐसा अत्याचार

दासी—इससे भी ज़्यादा।

सेठ धनवाहा—वह क्या ?

दासी—वह यह कि इन तीन दिनों में किसी ने इस बेचारी की सुध भी नहीं ली समय पर अन्न जल न मिलने के कारण वह कुसुम के समान कोमल अङ्ग वाली बालिका तड़प तड़पकर मरजाए तो कुछ असम्भव नहीं इसलिये आप जल्दी उसकी खबर लें।

सेठ धनवाहा—वह कहां बन्द है ?

दासी—इस घर के पिछवाड़े जो तहखाना है उसमें है।

सेठ धनवाहा—मगर तूने यह सब हाल पहिले ही मुझसे क्यों न कहा।

दासी-सेठानी जी ने मुझे बहुत डराया धमकाया और ये कहा था कि यदि तूने सेठ जी से यह बातें कहीं तो तेरी बड़ी दुर्दशा होगी इस भय से मैं चुप रही परन्तु आज आपकी

घबराहट और ऐसी कड़ी प्रतिज्ञा सुनकर मुझसे नहीं रहा गया अगर सेठानी जी को मालूम होगया कि मैंने आपसे कहा है तो वह चंदनबालाका सारा क्रोध मेरे ऊपर उतारेंगी।

सेठ धनवाहा—मैं उस निर्दयी स्त्री को इतना समय ही न दूंगा कि वह दूसरे पर अत्याचार कर सके· अच्छा तो यहीं ठहर मैं चन्दनबाला को इस तहखाने में से निकालकर लाता हूं।

दासी—सेठजी मैं दासी हूं परन्तु इतना अवश्य कहूंगी कि हमारी मालकिन स्त्री नहीं राक्षसनी है। आप की यह वेदना ओर घबराहट देखकर भी उसके दिल में दया और प्रेम उत्पन्न नहीं होता उस ग़रीब को जैसा जैसा सताया है मैं कुछ नहीं कह सक्ती पर वह ऐसी सुशील कन्या है कि चुपचाप सब कुछ सहन करतो गई और कभी आप से सेठानी जी के विरुद्ध एक शब्द भी न कहा।

जब से वह आई यहां, चैन न पाया उसने।
पेट भर कर कभी, भोजन भी न खाया उसने॥
झिड़कियां भाग में थीं, उसके कभी गाली थी।
सच ये है रूप में, दासी के कोई देवी थी॥

[सेठ धनवाहा चन्दनबाला को लेने जाता है मूला घबराई हुई आती और दासी से पूछती है]

मूला—क्यों दासी! सेठ जी क्रोध भरी आवाज़से क्या कर रहे थे?

दासी–किसी भेदी ने उन्हें चन्दनवाला का सब हाल बता दिया इस लिये वह आप पर और मुझ पर बिगड़ रहे थे।

मूला–वह ऐसा कौनसा हमारा शत्रु है जिसको यह बात मालूम थी और जिसने सेठ जी से कहा?

दासी–मुझे तो ऐसा जान पड़ता है कि नाई ने उनसे कहा है क्यों कि जिस मनुष्य के साथ वह अभी बातें कर रहे थे उसकी सूरत तो मैंने नहीं देखी परन्तु उसकी आवाज़से ऐसा ही सन्देह होता है।

मूला–अवश्य उसी ने कहा होगा तेरा विचार बिलकुल ठीक है अच्छा अब सेठ जी कहां गये?

दासी–वह तहखाने से चन्दनबाला को निकालने गये हैं।

मूला–तो मुझे दो चार दिन के लिये खिसक जाना चाहिए नहीं तो वह आते के साथ ही बड़ा ऊधम मचाएगा।

[इतना कह कर निर्दयी मूला रसोईखाने की कोठरी में ताला लगाकर बाहर चली जाती है थोड़ी देर बाद सेठ धनवाहा भी चन्दनबाला को गोद में उठाये हुए आता और उसे धरती पर लिटा देता है]

(चन्दनबाला को देखकर) बेचारी भूख प्यास से कैसी हो गई है।

सेठ धनवाहा–दासी तू इसके पास बैठ मैं इसके लिए कुछ खाने को लाता हूं।

[सेठ धनवाहा रसोईखाने की तरफ जाता है और दरवाज़े पर ताला देखकर घबराता है]

सेठ धनवाहा–अब मैं क्या करूं और इस समय कहां से भोजन का बन्दोबस्त करूं यदि थोड़ी देर के अन्दर उसे खाने को कुछ न मिला तो यह ग़रीब अवश्य ही मर जायगी दासी तूने सेठानी का दुष्टपना देखा वोह रसोई घर के दरवाज़े पर ताला लगा कर कहीं बाहर चली गई।

दासी–ताला लगा कर ?

सेठ धनवाहा–हां ताला लगाकर अब मुझे तेरे एक एक शब्द पर अच्छी तरह विश्वास हो गया मैं वास्तव में उसे इतना नीच नहीं समझता था जितना वह इस कार्य से साबित हुई।

निर्दयी ने आह ! कैसी, नीच अवस्था पाई है।
स्त्री का रूप धारण करके, डायन आई है॥
शत्रु है इसकी जब मेरी भी, वह प्यारी नहीं।
सच तो ये है आस्तीं का, सांप है नारी नहीं॥

दासी–सेठ जी चिन्ता न कीजिये यदि इस ग़रीब के भाग में अभी कुछ दिनों और इस संसार का अन्न, जल लिक्खा है तो कुछ न कुछ उपाय अवश्य ही होकर रहेगा आप यहां पर ठहरें मैं कुछ न कुछ ढूंढ ढांढ कर लाती हूं।

(दासी अन्दर जाती है)

सेठ धनवाहा–जिस तरह पानी बिना मछली तड़फती है उसी प्रकार यह निर्दोष वाला अन्न बिना तड़प रही है।

दासी पारवती–(वापिस आकर) और तो कुछ नहीं मिला केवल यह थोड़ीसी उड़द के बाकले मिले हैं।

सेठ धनवाहा–इस समय यही सही।

[सेठ धनवाह ने तुरन्त उन बाकलों को एक सूप में डालकर चन्दनवाला के सामने रख दिया और दासी से कहा कि तू घर के पिछवाड़े की तरफ से किसी को न आने देना मैं लोहार को बुलाकर लाना और इसकी बेड़ियां कटवाना हूं दासी और सेठ दोनों चले जाते हैं]

चंदनवाला–(धीरे धीरे होश में आती है) आहा कैसा एकान्त स्थान यहां मैं संसार के सारे झगड़ों से बचकर शान्ति के साथ धर्म ध्यान कर सकती हूं (अपने चारों ओर देख कर) हैं यह तो वह जगह नहीं जान पड़ती जहां माता मूला ने मुझे बन्द किया था [गौर से देखकर] यह तो निश्चय सेठ जी का मकान है परन्तु मुझे वहां से यहां कौन लाया [उड़द के बाकले देखकर]और यह सूपमें क्या है ! 'उड़द' ठीक ठीक अब

मैं समझ गई कल्याण हो माता मूला तुम्हारा कल्याण हो तुम आज मेरे तीन दिवस के व्रत का पारना कराना चाहती हो अच्छी बात हैं यदि आज मेरे पिछले जन्म की नेकियों का प्रभाव प्रगट होने वाला हो और साथ ही मुझे इस तप का पूरा पूरा फल मिलने वाला हो तो जब तक कोई पवित्र और सत पात्र अतिथि यहां आकर मेरे हाथों से यह अहार स्वीकार न करेगा उस समय तक मैं भी पारना न करूंगीं।

कोई देता है धन का दान, जीवन दान देदूंगी।
न होगा ये प्रण पूरा, तो अपनी जान देदूंगी॥
न समझो बालकों का खेल, यह श्रद्धा सती की है।
हिलादेगी पहाड़ों को, कि प्रतिज्ञा सती की है॥

[महावीर स्वामी का प्रवेश चन्दनबाला उनके मुखड़े का तेज देखकर मन ही मन में प्रसन्न होती और धर्म प्रेम के बस होकर खड़ी हो जाती है]

चंदनबाला—(हाथ में उड़द लेकर और एक पांव चौखट से बाहर निकालकर) हे कल्याणकारी स्वामी हे करुणा के समुद्र दासी के इस शुद्ध अहार को ग्रहण करके इसके कष्ट भरे जीवन को भवसागर से पार लगाओ।

क्या कहूं क्या हैं दयाके धर्मके अवतार हैं।
शान्ति आनन्द सुख सन्तोष हैं उपकार हैं॥
निर्बलों के बल हैं शक्तिमान हैं आधार हैं।

कोई भी जिसका नहो आप उसके पालनहारहैं
कामनाएं आज मेरे मन की पूरी कीजिये।
मोक्ष और मुक्तिका प्रभू दान मुझको दीजिये॥

(भगवान् महावीर यह देखकर कि वह कन्या रोती नहीं जिसके कारण उनकी प्रतिज्ञा पूरी नहीं हो सकी आहार लियेबिना उल्टेलौट पड़े। चन्दनवाला प्रभूको वापिस जाते देखकर निराश हुई और दाढ़ें मारकर रोने लगी प्रभू ने पीछे फिरकर देखा कि वोह कन्या रो रही है अब तो अपनी प्रतिज्ञा की कुल बातें पूरी होती देखकर बड़ी प्रसन्नता से सती का दिया हुआ आहार आपने ग्रहण कर लिया चन्दनवाला की भावना से प्रसन्न होकर देवताओं ने उसी समय वहां पर आकाश से वारह करोड़ मुद्राओं की वर्षा की उस समय सती के पैरों में पड़ी हुई लोहे की वेड़ियां सोने का गहना वन गई। उसके सिर पर नये केश निकल आये और आकाश में जयजयकार होने लगा और कोशाम्बी नगरी के कोने कोने में इस चमत्कार घटना का समाचार फैल गया राजा और वहुत से मनुष्य वहां इकट्ठे हो गये सेठ धनवाहा लुहार को लिये हुए आ पहुंचा समस्त पुरुष देवताओं की यह लीला देख कर आश्चर्य में पड़ गये, सती चन्दनवाला ने सबको प्रणाम् किया और इस प्रकार कहने लगी।)

चंदनवाला–जगत्पति प्रभु का पारणा कराने से आज जो बड़ा

भारी लाभ मुझे मिला है उसका कारण केवल मेरे पूर्व जन्म के पुण्य ही नहीं दूसरों का उपकार भी है, मैं सत्य कहती हूं कि जो कार्य मेरी असली माता रानी धारणी से न बन पड़ा वह धर्म माता मूला देवी ने कर दिखाया, यदि वोह मेरी यह अवस्था न बनातीं तो मैं किस प्रकार भगवान् की कठिन प्रतिज्ञा पूरी करती और किस तरह मुझे यह लाभ मिलता ? इसलिये मैं हाथ जोड़कर प्रार्थना करती हूं कि उनसे कुछ न कहा जाय (राजा से) हे राजन् इस शुभ कार्य में आपका और आपके सेनापति का भी बहुत बड़ा उपकार है, यदि आप मेरे पिता दधिवाहन से युद्ध न करते तो मैं क्योंकर दासी बनती और आपके सेनापति किसी वेश्या के हाथ बेच डालते तो यह अवसर कैसे हाथ आता ? इसके बाद मुझे जो कुछ कहना है वह अपने पूज्य धर्म-पिता सेठ धनवाहाके गुणों और उपकारों का वर्णन करना है। (सेठ धनवाहा से) आप मेरे धर्म-पिता और गुरु हैं आपने मुझे दासी नहीं अपनी सन्तान से बढ़कर माना और प्यार किया। धर्मकार्य में मेरी सहायता की, आप ही की कृपा से मेरे सारे पाप दूर हुए।

शतानीक—धन्य है सेठ धनवाहा तुम्हारे धर्म और दया को धन्य है।

धनवाहा—मेरी गुणवती पुत्री एक निर्बल स्त्री की रक्षा करना मेरा धर्म था इसलिये मैंने अपने कर्तव्य से अधिक कुछ

भी नहीं किया मैं तो क्या हूं तू वोह देवी है जिसके गुणों से प्रसन्न होकर देवता भी यहां तक चले आए धन्य है उस माता को जिसके पवित्र और उत्तम गर्भ से तुझ जैसी सती पुत्री ने जन्म लिया।

चंदनवाला—मेरे धर्म-पिता इसमें संदेह नहीं कि मैं आपकी दासी हूं और जीवन के अन्त तक दासी ही रहूंगी परन्तु इस समय मेरी एक प्रार्थना है क्या आप उसे स्वीकार करेंगे।

सेठ धनवाहा—भद्रे! मैं तेरी हर एक इच्छा पूरी करनेको तैयारहूं।

चंदनवाला—मेरा मन संसार के झगड़ों से उचाट हो गया है इसलिये मैं अपना सारा जीवन भगवान महावीर स्वामी के चरणों में रहकर धर्म कार्य और अनाथों की सेवा में बिताना चाहती हूं क्या आप अपनी दासीको इसकी आज्ञा दे सक्ते हैं

सेठ धनवाहा—बड़ी खुशी से।

चंदनवाला यह सुनकर प्रसन्न होती और हाथ जोड़कर
सेठ के चरणोंमें बैठ जाती है सेठ बड़े प्रेम से उसके
सर पर हाथ फेरता और आशीर्वाद देता है
आकाश से आवाज़ आती है।

सेठ—कल्याण हो पुत्री तेरा कल्याण हो।

आकाशवाणी—ऐ राजा शतानीक और कौशाम्बी नगरी के वासियो इस सारी सम्पति की स्वामिनी चन्दनवाला है जब

यह पुत्री वीर प्रभू की प्रथम साध्वी होगी तब यह सम्पत्ति दान करने के काम में आयगी ।

सेठ धनवाहा-[प्रसन्न होकर] भगवान महावीर स्वामी की जय बोलो जैन धर्म की जय बोलो चन्दनबाला की जय ।

वीर अकलंक देव

यह पुस्तक लाला शेरसिंह साहब जैन "नाज़" देहलवी की सब से प्रथम रचना है, जो उर्दू ज़बान में प्रकाशित हुई है। रचिता ने इसमें जिन धर्म के नियमों पर अत्यन्त सूक्ष्मतया वाद विवाद की है और दिखलाया है कि प्राचीन काल में बौद्ध मत के आचार्य किन २ यत्नों से जिन धर्म को मिटाना चाहते थे किन्तु जिन भगवान के सेवकों ने अत्यन्त वीरता और साहस के साथ अपनी जानें न्यौछावर करके अपने धर्म की रक्षा और सहायता की।

जिन धर्म के बचाने और इसका प्रचार करने के लिये वीर अकलङ्क देव और उनके लघु भ्राता निकलङ्क देव का स्वाई विचार करके दश उनके हृदय हिला देने वाले चरित्र और कारनामे अन्त में सफलता, गर्ज़ कि यह किताब इस क़ाबिल है कि आजकल के तमाम जैनी चाहे वह दिगम्बर हों या सिताम्बर हों इसको गौर से पढ़ें और वीर अकलङ्क देव व निकलङ्क देव के कारनामों से शिक्षा ग्रहण करें।

मूल्य फ़ी जिल्द ।≈)

मिलने का पता—

रेलाल देवीसहाय

प्रिन्टर, सदर बाज़ार देहली